IJMRSETM

e-ISSN: 2395 - 7639

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

IN SCIENCE, ENGINEERING, TECHNOLOGY AND MANAGEMENT

Volume 10, Issue 1, January 2023

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 7.580

+91 99405 72462 +9163819 07438 ijmrsetm@gmail.com www.ijmrsetm.com

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में स्त्री पात्रो का आर्थिक एवं राजनीतिक चेतना के स्वर

[1]Reena Dayal & [2]Pooja Verma

[1]Research Scholar, Dept. of Hindi, Himalayan University, Arunachal Pradesh, India

[2]Dept. of Hindi, Himalayan University, Arunachal Pradesh, India

सार

मैत्रेयी पुष्पा नई पीढ़ी की बहुचर्चित लेखिका है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में स्त्री-सशक्तीकरण की भावना दिखाई देती है। नारी सशक्तीकरण में नारी ने अपने पृथक अस्तित्व, अपने अहं, अपने गौरव की अभिलाषा में पुरुष के स्वामित्व के समक्ष झुकने से इन्कार कर दिया है। नारी सशक्तीकरण नारी के प्रति होने वाले शोषण के विरुद्ध सशक्त विद्रोह है। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने कथा साहित्य में नारी से संबंधित मूलभूत प्रश्नों को उठाकर उनके आलोक में बदलते परिवेश, बदलती स्त्री और बदलते मानदण्डों द्वारा नारी सशक्तीकरण को रेखांकित किया है। हिन्दी कथा साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षरों में से मैत्रेयी पुष्पा ने नारी चेतना और नारी सशक्तीकरण को लेकर एक उच्चकोटि का कथा साहित्य हिन्दी को दिया है।

परिचय

समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में लेखिकाओं के आगमन के साथ ही नारी की स्थिति तथा नारी चेतना को उजागर कर बहुत कुछ लिखा जा रहा हैं। अपने आस-पास त्रासदी एवं शोषण भोग रहे चरित्रों के तनाव को आत्मसात कर साहित्य में उसे स्थान दे रही हैं। हर देश की नारी चाहे वह अनपढ़ हो या पढ़ी -लिखी, अमीर हो या गरीब, उच्चवर्ग की हो या निम्नवर्ग की, गाँव की हो या शहर की, किन्तु सभी जगह स्त्रियों की आँखों के आँसू बोलते हैं। [1]

स्त्री लेखिकाओं ने अपने लेखन के अंतर्गत स्त्री की विभिन्न समस्याओं, उनके शोषण की अभिव्यक्ति करते हुये, उनमें पैदा होती चेतना पर नजर डाली। इन लेखिकाओं ने स्त्री समाज को मुक्ति का मार्ग दिखाया। इन्होंने अपने स्त्री पात्रों के माध्यम से स्त्री मुक्ति के विविध साधनों से उसे अवगत कराया। उषा प्रियवंदा, कृष्णा सोबती, ममता कालिया, मृदुला गर्ग, प्रभा खेतान, चित्रा मुदगल, मैत्रेयी पुष्पा, अलका सरावगी, गीतांजलिश्री आदि अंतिम दशक की ऐसी लेखिकाएं हैं, जिनका लेखन स्त्री संघर्ष एवं स्त्री मुक्ति की वकालत करता है। इन्हें पूरा विश्वास है कि – "समय जरुर लगेगा मगर सीमाएँ हटेगी- भोग्या और देवी के बीच पिसती हुई स्त्री के लिए आत्म सम्मानपूर्ण समाधान खोज ही लेगी। "[1]

मैत्रेयी पुष्पा का कथा साहित्य समकालीन लेखिकाओं से वैचारिक दृष्टि से हटकर है। नारी विमर्श को ध्यान में रखकर समकालीन लेखिकाओं ने अपने साहित्य में विचार व्यक्त किये। किन्तु इन सभी लेखिकाओं में मैत्रेयी पुष्पा अपनी अलग पहचान खड़ी की है। वर्षों से नारी जिस तरह हमारे भारतीय समाज में उपेक्षित और दीन हीन वाली स्थिति में रही उसी स्थिति परिस्थिति से परिचय कराते हुये, मैत्रेयी पुष्पा हमारे समक्ष नारी की नवीन छवि को जन्म देती हैं। मैत्रेयी ने नारी जाति सम्बन्धित समस्त समस्याओं, कुप्रथाओं, रीति रिवाज, कानून,[2] वैधता, अवैधता आदि को अपने उपन्यासों का आधार बनाया है एक नवीन विचारधारा के साथ। यही कारण मैत्रेयी पुष्पा अन्य उपन्यासकारों से अलग हटकर दिखलायी देती हैं। मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य में परम्परावादी विचारधारा को लेकर नारी विमर्श नहीं है बल्कि आधुनिक विचारों को व्यक्त करता नारी विमर्श है, जो साहित्य जगत में चर्चा का विषय बना है। उनके कथा साहित्य में भारतीय ग्राम्य समाज का वर्णन मिलता है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों के पात्र अपने अधिकारों के प्रति सजग है। "मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास की मुख्य पात्र(स्त्रियाँ) हमेशा से स्वयं सिद्ध नायिकाएँ रही हैं, वह चाहे मंदाकिनी हो, सारंग हो, शीलो या फिर अल्मा या फिर अन्य कोई.....वैसी स्त्रियाँ जो हमारे समाज और उसमें भी खासकर स्त्रियों के जीवन को बदलने का दम रखती हैं।[3] अपने बल पर अपने जीवन चुनने-रचनेवाली, अपने दम पर समाज की दशा-दिशा को मोड़ने का दम रखने वाली सबल स्त्रियाँ। हालाकि यह सबलता उन्हें कोई बेमेल नहीं मिलती, इसके लिए उनका संघर्ष, उनकी बेचैनी, उनकी कश्मकश सब दुर्धर्ष होते हैं। "[2]

'इदन्नमम' विंध्याचल के तीन पीढ़ियों की कथा है। नारियाँ दुष्प्रवृत्तियों का शिकार होती हुई अपने अस्तित्व की लड़ाई खुद लड़ती है। उपन्यास की केन्द्रीय पात्र मंदाकिनी एक ऐसी संघर्षशील युवती के रूप में सामने आती है जो परिवार और समाज द्वारा

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

नारी के लिए निर्मित बंधनों को तोड़ती है। समाज के कुछ कटु यथार्थ को लेखिका ने मंदाकिनी के संघर्ष के माध्यम से जीवंत अभिव्यक्ति प्रदान की है। मंदा की चरित्र में जीवटता है, साहस है, महत्त्वाकांक्षा और गजब का जुझारु व्यक्तित्व है। मंदा के संदर्भ में राजेन्द्र यादव का कहना है—"महानगरीय मध्यवर्ग की संघर्ष करती और पाँवों के नीचे जमीन की तलाश करती कथा... नारियों के बीच गाँव की मंदा एक अजीब निरीह, निष्कवच, निष्छल दृढ़ संकल्प नारी का व्यक्तित्व लेकर उभरती है। ... उसकी लड़ाई दोहरी है, औरत होने की और वंचितों के अधिकारों की। "[3]

स्त्री विमर्श के क्षेत्र में मैत्रेयी पुष्पा का प्रमुख स्थान है। इनके उपन्यासों में सामाजिक परिस्थितियों और समस्याओं का ऐसा पटल है, जिसमें ये परिस्थितियाँ और समस्याएँ अभिव्यक्ति पाती हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में इनके उपन्यास न केवल समाज, बल्कि जीवन का भी दर्पण है। उनके उपन्यासों के स्त्री चरित्र सामाजिक रूढ़ियों से मुक्त होकर अपने जीवन को, अपने समाज को सुखदायक बनाने का प्रयत्न करती हैं। डॉ. निर्मला जैन ने अपने विचार व्यक्त करती हुई कहती हैं[4] - "कड़वी सच्चाई यह है कि पुरुष-प्रधान समाज में सदियों से महिलाओं का दमन और शोषण होता रहा है, समाज में उनकी भूमिका और उनकी सामाजिक हैसियत का निर्धारण पुरुष के द्वारा हुआ है। समाज के हाथों जो दर्जा स्त्री को दिया जाता है, वह किसी हद तक उसकी मानसिक बनावट का नियामक होता है।[5] औपनिवेशिक मानसिकता इस पूरे प्रश्न को पुरुष के खिलाफ स्त्री या पुरुष बनाम स्त्री के ढाँचे में देखने की मजबूरी पैदा करती है। कुल जमा नतीजा यह होता है कि वह या तो पुरुष प्रदत्व परिभाषा में अपनी सार्थकता तलाशती हुई उसके समर्थन में खड़ी हो जाती है या विरोध में। इसलिए तमाम महिला-रचनाकारों ने इसी 'एंग्जाइटी ऑफ ऑथरशिप' के मानसिक चौखटे में रचना कर्म को अंजाम दिया हैं। "[4]

मैत्रेयी पुष्पा के कथा साहित्य की स्त्री चरित्र में सामाजिक सचेतनता विद्यमान हैं। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों के स्त्री चरित्र सामाजिक रूढ़ियों से मुक्त होकर अपने जीवन को, अपने समाज को सुखदायक बनाने का प्रयत्न करती है। 'इदन्नमम' उपन्यास में मंदा अपने पिता के अस्पताल का स्वप्न पूरा करने के लिए निरंतर संघर्ष करती है। गोपालपूरा, खमा, डिकोली, झकनवारा, आदि लगभग पन्द्रह गाँवों में खबर करा दी। पंचायत बुलाकर गाँवों की जनसंख्या दर्ज की। सभी प्रधानों के हस्ताक्षर लेकर अपनी समस्याएँ लिखी। बीमारियों और मृत्यु का भयानक हवाला दिया गया। उस क्षेत्र के एम.एल.ए. राजासाहब से गुजारिश की पर राजासाहब जैसे राजनेता नही चाहते है कि सोनपुरा में अस्पताल बने। फिर भी मंदा की लड़ाई रुकी नहीं। राजासाहब को भी मंदा का साहस देखकर आश्चर्य होता है – "कैसी जहरीली हँसी है लड़की की ! कमाल है, गाँव गाँव नेता हुए जा रहे हैं लोग।[6] पुरुष तो पुरुष इस लड़की की हिम्मत---! न- कुछ उम्र में कैसी उँची बातें करती है।"[5] अंततः राजासाहब को भी उसके सामने झुकना पड़ा और अस्पताल में डाक्टर इंद्रनील और कम्पाउंडर को भेज दिया गया।

हमारे समाज में सदियों से नारी पात्र जिस तरह से उपेक्षित रहा है और समाज व स्वयं नारी एक विकृत मानसिकता से जकड़े हुए प्रतीत होते है, स्त्रियों पर अनेक नैतिक तथा सामाजिक वर्जनाएँ लागू की गई। इस संदर्भ में फ्रांसिसी लेखिका सिमोन द बोउमार ने स्त्री जाति की नियति को इस तरह व्यक्त किया है -----"औरत जन्म से ही औरत नहीं होती बल्कि बढ़कर औरत बनती है। कोई भी जैविक मनोवैज्ञानिक या आर्थिक नियति आधुनिक स्त्री के भाग्य की अकेली नियंता नही होती। पूरी सभ्यता ही इस अजीबोगरीब जीव का निर्माण करती है।"[6] मैत्रेयी पुष्पा ने उस छवि को तोड़ा है। अपनी स्त्री पात्र के माध्यम से एक सशक्त एवं दृढ़ चरित्र की रचना भी की। [7]यही कारण है कि मैत्रेयी पुष्पा अन्य महिला उपन्यासकारों से पृथक दिखलायी देती है और नारी जगत को नवीन दृष्टिकोण दिखलाती हैं। मंदा का उद्देश्य है ग्रामीण विकास। वह अकेले ही ग्रामीण समाज, शोषित वर्ग और आदिवासी मजदूरों के अधिकारों के लिए संघर्ष का अभियान चलाती है। गाँव - गाँव जाकर रामायण का अर्थ समझाती। मंदा सामूहिक संघर्ष में विश्वास करती है और उसके लिए लोकशक्ति को जाग्रत करती है। मंदा ने मजदूरों को उनकी मेहनत का महत्त्व और मुल्य समझाती है। फिर आगे बढ़कर अभिलाख सिंह जैसी शक्तिशाली ठेकेदार को चुनौती देती है—"तो क्या करोगे तुम ! क्या कर सकते हो ?अभिलाख, बऊ ने मताई- बाप का हश्र सुना नहीं दिया, गुना भी दिया है। तुम सही-सलामत क्रैशर सलाते रहो, बस इस बात के लिए ठाकुर जू से भजन माँगते रहना, वह सिर झटककर रास्ता काटती हुई आगे बढ़ गई। "[7]

मंदा को आश्चर्य होता है कि समाज कल्याण हेतु उसके द्वारा संगठित शक्ति का गाँवों पर असर होने लगा है। मंदा का आत्मविश्वास बढ़ गयी।[8] "देखती है मंदाकिनी, गौर से देखती है उनका मुख। गौरवर्ण के प्रौढ़ मुख पर अपूर्व-सी आभा है। जैसे नए विहान की ओर बढ़ते हुए उनका मुख दमक रहा हो ! ऐसे जीवट की कामना तो की थी मंदाकिनी ने, लेकिन कल्पना नहीं की थी कि अन्य गाँव भी उसके अभियान का इस कदर स्वागत करेंगे। ग्रामीण औरतें इस हिम्मत से सामने आ जाएँगी और जबर-पैसेवाले लोगों से भिड़ने-जूझने को आगे बढ़ चलेंगी। "[8]

मैत्रेयी पुष्पा ने मंदा जैसे युवती के रूप में उपन्यास यह प्रभाव छोड़ने में पूरी तरह सफल रहा है कि अब नारी शक्ति जाग उठी है। अब नारी सामाजिक ढाँचे को तोड़ती हुई न केवल वह अपने अधिकारों को सुरक्षित करेगी वरन समाज को नई दिशा में आगे बढ़ायेगी। मैत्रेयी पुष्पा ने मंदा के संघर्ष के द्वारा यह दिखाया है कि आज नारी अपने अधिकारों के लिए दृढ़ता व आत्मविश्वास अपने

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

अंदर जगा चुकी है। मुक्ति की छटपटाहट निरंतर उसे संघर्ष के लिए प्रेरित कर रही है। [9]पुरानी मान्यताओं को लकीरों को वह पार करने लगी है। तसलीमा नसरीन के अनुसार---"जिस दिन यह समाज स्त्री शरीर का नही-शरीर के अंग-प्रत्यंग का नहीं, स्त्री की मेधा और श्रम का मूल्य सीख जाएगा, सिर्फ उस दिन स्त्री मनुष्य के रूप में स्वीकृत होगी।"9 'इदन्नमम' की नारी पात्र मंदा और मैत्रेयी पुष्पा की अन्य उपन्यासों के नारी पात्र में कुछ अंतर दिखाई देती हैं। अन्य उपन्यासों के नारी जैसे—सारंग, अल्मा, शीलो, भूवन मोहिनी आदि अपने अधिकारों के लिए संघर्ष किया हैं। लेकिन मंदा की संघर्ष सदा समाज कल्याण है।मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में राजनीतिक चेतना सम्पन्न नारी पात्रों में प्रायः ऐसी ग्रामीण नारियों का चित्रण हुआ हैं[10], जिनमें वर्ग-संघर्ष की भावना तीव्र रूप से चिह्नित है। अपने अधिकारों के प्रति सचेत होने के कारण उनमें शोर्षक वर्ग के प्रति विद्रोह की भावना है। इनके यहाँ कुछ नारी पात्र सक्रिय तथा कुछ निष्क्रय रूप से राजनीतिक क्रियाकलापों में भाग लेते हैं। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में यह महसूस किया गया है कि यदि महिलाओं को निर्णयकारिता के स्तर पर पहुँचना सुलभ कर दिया जाए तो महिलाओं की समस्याओं को सुलझाने में सरलता होगी। आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के विभिन्न कार्यक्रमों को सम्पादित करने में भी महिलाओं को रचनात्मक क्षमता का सदुपयोग हो सकेगा। यह दृष्टिकोण भी सामने आया है कि महिला सशक्तीकरण के लिए महिलाओं को निर्णय करने की प्रक्रिया से जोड़ना होगा, चाहे यह घर की चार दीवारों में लिए जानेवाले निर्णय हो या सरकारी स्तर पर। अतः राजनीतिक सहभागिता को बढ़कर महिला सशक्तीकरण के प्रयासों को सार्थक बनाया जा सकता हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने नारी को अधिक से अधिक राजनीति के साथ जोड़ने का प्रयास किया हैं।[11] उसका यह भी मानना है कि जिस नारी के पास सत्ता हैं वो अपने अधिकार का उपयोग करें। कितनी ही स्त्रियाँ सत्ता में आने के बाद यह देखने को मिलता है कि- "समाज से लेकर राजनीति तक यह बात अक्सर देखने में आती है कि औरत आदमी के स्वर में स्वर ही मिलाती है। वह पुरुष चाहे पति हो, बेटा हो या प्रेमी हो, वह मर्दाने पक्ष में झुकी रहती हैं, वकील की तरह भी और लठैत की तरह भी। यह सब नहीं दिखता हमें तो वह ऐसी ही मालिक हो जाना चाहती हैं, जैसा की मर्द होता है। वह हर हाल में पुरुष की नकल करती है। "[10]

मैत्रेयी पुष्पा अपने उपन्यासों में कुछ ऐसे स्त्री पात्र सामने लाती है जिन्होंने भ्रष्ट राजनीति, राजनेताओं, वोट की राजनीति, धोखाधड़ी करनेवाले राजनेताओं के खिलाफ संघर्ष का अभियान चलाती है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास इक्कीसवीं सदी की दहलीज पर दस्तक देते भारतीय ग्रामीण परिवेश का दर्पण है। मैत्रेयी ने गाँव की गंदी राजनीति को करीब से देखा है। उसी राजनीति में गाँव की औरतों को खड़ी करती है। 'इदन्नमम' उपन्यास की स्त्री पात्र मंदाकिनी राजनीतिक व्यवस्था के साथ संघर्ष करती है। वह पाँचवी कक्षा तक पढ़ी हुई है, फिर भी एम.एल.ए.राजासाहब को भी झुकने के लिए मजबूर करती है । गाँव वालों ने मंदा का साथ दिया। अंत में गाँव की मंदा ने राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर की लोकतांत्रिक प्रणाली में गाँव का अस्तित्व सिद्ध किया।[12]

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने कथा साहित्य में स्त्रियों को न्यायतंत्र के विरुद्ध लड़ते हुए प्रदर्शित किया है। 'इदन्नमम' उपन्यास के कथा क्षेत्र सोनपुरा, श्यामली आदि लगभग 15 गाँवों की माटी से जुड़ा है। यह सभी गाँव अत्यंत पिछड़े और राजनेताओं के वक्र दृष्टि का शिकार हैं। सोनपुरा गाँव की लड़की मंदा सर्वप्रथम अपने पिता का सपना पूरा करने की कोशिश करते है। पचांयत बुलाकर गाँवों की सभी प्रधानों के हस्ताक्षर लेकर गाँव की जनसंख्या दर्ज की और अपनी परेशानियाँ लिखी। इस क्षेत्र के एम.एल.ए. राजासाहब है। मंदा तय किया कि----"अबकी बार हम किसी आफिस में नहीं, सीधे राजा साहब के पास भेजेंगे अपना प्रार्थना पत्र। प्रधान काका और कायलेवाले महाराज इसे ले जाएँगे स्वयं अपने हाथो। राजा साहब यहाँ के एम.एल.ए. है। मन्त्री है। प्रतिनिधि हैं। जिम्मेदार है। यह कहो कि भाई-बाप हैं इस क्षेत्र के। कुछ-न-कुछ सोचेंगे अवश्य।"[11] लेकिन मंदा क्या जाने राजनीति क्षेत्र का षड़यंत्र। इस बात पर महाराज टीकमसिंह ने मंदा को समझाने लगे कि---- "राजकाज में तेजी लाना अपने हाथ की बात नहीं। वे लोग अपने तरीके से करतें हैं हर काम। नौकरशाह और राजनेताओं के हाथ का खिलौना हो गया है हमारा जीवन। यहाँ प्रजातन्त्र नहीं, शोषणतन्त्र लागू है। "[12]तब मंदा ने निश्चय किया राजनेताओं को सही रास्ते में लाने के लिए एक ही उपाय है चुनाव में वोट न डालने का निर्णय। मंदा ने राजनेताओं को चुनौती देती है ---"सो क्या करें? अबकी बार ठान लिया है कि हम कहे की नही करे की परतीत करेंगे। और अगर नही तो ऐन खाली उठा ले जावें पेटी आपके आदमी। वोट नही पड़ेगा एक भी। "[13] अंत राजा साहब को उसके सामने झुकना पड़ा और मंदा अपनी मंजिल तक पहुँच गयी।मैत्रेयी पुष्पा के रचनाओं की स्त्री भले ही गाँव की है, किन्तु वह अपना जीवन स्वतंत्र रूप से जीना चाहती है। आधुनिक नारी आज नई संकल्प-शक्ति के साथ जीने लगी है। अपने अधिकारों के प्रति वह सचेत हो चुकी है। निर्मल वर्मा के अनुसार ----"नारी अपने अधिकारों की इच्छा करे, अधिकारी भी बने, अधिकारी के इच्छुक व्यक्ति को अधिकारी भी होना चाहिए। "[14]

मंदा की दूसरी लड़ाई है गाँव में स्कूल स्थापना। मंदा देख रही है कि स्कूल होते हुए भी दूसरे स्कूल खोले जा रहे है। उधर जहाँ स्कूल नही है, जहाँ जिसकी जरुरत है वहाँ खोले जाने के संदर्भ में कोई चर्चा नही। मंदा कहती है----- "अबकी बार हम भी ऐन चेतन्त हैं। वे बेईमानी से नहीं चूक रहे तो हम ईमानदारी से क्यों चुकें। देखते हैं, ये कितनी चालाकी चलते हैं हमारे साथ। अपनी आँखों देखकर आए है हम। मबूसा गए थे, रिश्तेदारी है हमारी। वहाँ एक स्कूल होते हुए भी उसके बराबर में दूसरा बन गया। हमने पूछा, भइया, तुम्हारे गाँव में यह दूसरा स्कूल ? बोल, पहला खारिज कर दिया ओवरसियर ने और प्रधानजी ने। अब यह मिलीभगत ही तो एसा अन्धेर कर रही है हमें सो ऐन उजागर हैं। कहनेवालों ने भी हमें बता दिया कि पन्द्रह प्रतिसत कमीसन लिया है ओवरसियर

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

ने। कुछ ऊपर भी पहुँचाया होगा, ऊपरवालों ने और ऊपर। और एम.एल.ए. जी के लिए सत प्रतिसत वोट। ”[15] मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी रचनाओं में यह समाचार दिया है कि –भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, अकर्मण्यता, अवसरवाद, स्वार्थलिप्सा आदि से सरकारी व्यवस्था जर्जर बन चुकी है।राजनीति के द्वारा समाज का कल्याण संभव होता है। राजनीतिक चेतना का अर्थ ही है----“वह चेतना जो मनुष्य में अपने हक, अधिकार और कर्तव्यों का निर्धारण करे। राजनीतिक चेतना द्वारा ही मनुष्य समाज, राज्य, राष्ट्र यहाँ तक कि विश्व में अपना इच्छित स्थान निरूपित करता है। चेतना ही राजनीति को संयमित, अनुशासित और कल्याणकारी बनाती है। ”[16]

महिला सशक्तीकरण के लिए महिलाओं को निर्णय करने की प्रक्रिया से जोड़ना होगा, चाहे यह घर की चार दीवारों में लिए जानेवाले निर्णय हो या सरकारी स्तर पर। अतः राजनीतिक सहभागिता को बढ़कर महिला सशक्तीकरण के प्रयासों को सार्थक बनाया जा सकता है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में यह महसूस किया गया है कि यदि महिलाओं को निर्णयकारिता के स्तर पर पहुँचना सुलभ कर दिया जाए तो महिलाओं की समस्याओं को सुलझाने में सरलता होगी। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास ‘चाक’ में सारंग, ‘अल्मा कबूतरी’ में अल्मा ने चुनाव तंत्र में भाग लिया है, परंतु ‘इदन्नमम’ कुछ अलग है। यहाँ स्त्री पात्र भ्रष्ट राजनेताओं के विरुद्ध खड़ा होकर पुरुष सत्ता की राजनीतिक षड़यंत्र का पर्दाफाश किया है।‘इदन्नमम’ उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा ने राजनीति का एक ऐसा चेहरा सामने लाया है जो आदिवासी, मजदूरों जैसा पिछड़े लोगों को वोट बैंक के सिवाय कुछ नही मानता है। इन बरसों से चली आयी व्यवस्था को बदलने की कौशिश मंदा करती है। मैत्रेयी ने अपने उपन्यासों में वोट की राजनीति करनेवाले राजनेताओं और उनके गिरोहों का पर्दा फाश किया हैं। डॉ. क्षितिज धुमाठु के राष्ट्रों में [17]----“चुनाव घोषित होने पर नेता लोग अपने-अपने चुनाव क्षेत्र के दौर करके मतदाताओं की स्थिति का अंकन करते हैं। आज लोक प्रतिनिधि को ग्राम का विकास न करने पर प्रश्न पूछने वाले मतदाता निर्माण हो चुके हैं। निष्क्रिय उम्मीदवार को वोट देने से इन्कार करते हैं। इस उपन्यास के राजासाहब की भी यही स्थिति होने के कारण वे रात-बे-रात चुनाव क्षेत्र का दौरा करते हैं, वे कायले वाले महाराज से मिलने सोनपुरा आते हैं, सोनपुरा के लोग उनकी निष्क्रियता पर आलोचना करते हुए आने वाले चुनाव में मतदान पर बहिष्कार करने की सूचना देते हैं। ”[17]मंदा ने लोकशक्ति को जाग्रत करती है और राजनीति के वोट बैंक को बंद करना चाहती है। इसके लिए सोनपुरा के आसपास के गाँवों में दौर करती है। “उसके दौर तेजी पकड़ने लगे। नरसिंहतगढ़, खमा, डिकौली के अलावा पहाड़ो पर लगे क्रेशरों पर जाना होता है। प्रत्याशियों के कार्यकर्ता सौ-पचास रुपए या अद्धा बोतल शराब दो-चार दिन लगातार पिलाकर भरमा ले जाएँगे उन्हें। गोपालपुरा की ठाकुराइन को लेकर वह गाँव-गाँव गई, पहाड़ियों पर फिरती डोली। समझाया कि वोट नही देना है तुमको, लालच में नही आना है किसी भी तरह। ”18मंदा ने जनमानस को जाग्रत करके राजनेताओं को चुनाव पर बहिष्कार कर अपना संघर्ष आरंभ करती है। गाँव के लोगों को वह वोट की दलाली करने से सावधान रहने की बातें समझाती है। मंदा ने गाँवों में सलाह करके गोपालपुरा में वोट की राजनीति के संदर्भ बैठक बुलाकर जनसाधारण को सावधान किया। “सुख-दुख, लाभ-हानि, खुशी-गमी हमें नही व्यापती, हम तो इनके इस्तेमाल की चीज हैं, जिसे वे चाहे जब प्रयोग करें, चाहे जब खारिज कर दें। मुँह देखा, नासमझ दीन-हीन है, चाहे तो भीख दें, चाहें तो हाथ खींच लों। वे गुड़ डालेंगे, हम चोटों की तरह इकटठे हो जाएँगे। ”[19]मैत्रेयी पुष्पा ने अपने चिंतनपरक लेखन द्वारा पुरुष सत्ता की राजनीतिक षड़यंत्र का पर्दाफाश किया है। उनकी ग्रामीण नारी आंचलिक भूमि पर संगठित होकर स्त्री शक्ति के रूप में विकसित होती है और अंत में राजनीतिक जीवन में प्रवेश करती दिखाई देती है। अपने स्वतन्त्र अस्तित्व के प्रति जागरूक नारी राजनीति में अत्यन्त सफल दिखाई देती है।[18] जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्त्री अपने व्यक्तित्व को स्थापित कर रही है।मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास की नारी पात्र शक्ति, विद्रोह के प्रतीक रूप में गढ़ी गई है। जहाँ पराजय, हताशा और कुंठा के बावजूद स्वप्न और सृजन की अनगिनत सम्भावनाएँ है। मंदा के माध्यम से इस दो मुँहे समाज को यही संदेश दिया है कि जिस प्रकार पुरुष के हर अपराध व पाप समाज में क्षम्य माने जाते है उसी प्रकार स्त्री भी अपने छोटे से अपराध को अक्षम्य मान अपने को स्वाहा न कर समाज से अपने हर अधिकार मांगने चाहिए। मैत्रेयी पुष्पा के स्त्री पात्र स्वयं की व्यक्तिगत लड़ाई के बदले सामाजिक तथा सामूहिक संघर्ष भी लड़ते है। उनकी नारी चरित्र वर्चस्व को चुनौती देकर अपनी अलग राहों के ऐलान और अन्वेषण में स्त्री सशक्तीकरण का महती स्वप्न तैयार करती है।[19] मैत्रेयी पुष्पा के ‘इदन्नमम’ उपन्यास में ग्रामीण परिवेश व प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद नारी की महत्त्वपूर्ण और गरिमामय भूमिका की प्रतिष्ठापना हुई। मंदा अपने सारें निर्णय स्वयं लेती है। बलात्कार जैसी घटना से वह टूटती नही अपितु अपना प्यार ठुकराकर दूसरों की भलाई करने के रास्ते में चल पड़ती है। “गहरे अच्छवासों के बीच तेज गति से चल दी मंदाकिनी। किसी की पदचाप अब भी उसके पीछे है। ”[20]

विचार-विमर्श

कथा साहित्य में मैत्रेयी पुष्पा का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने अपने उपन्यासों में वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, दार्शनिक और नैतिक समस्याओं को नवीन दृष्टि से देखा और चित्रित किया है। मैत्रेयी पुष्पा ने मध्य वर्गीय परिवार में जूझती नारी के संघर्ष और द्वंद्व को नवीन रूप में प्रस्तुत ही नहीं किया अपितु उसमें नयी दिशा भी दी है। मैत्रेयी पुष्पा ने उपन्यासों में विद्रोह के साथ सामन्तीय संस्कारों, आर्थिक, पारिवारिक संबंधों में नवीन वैचारिक दृष्टि को अपनाया है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में लोक संस्कृति, संस्कार आदि का अंकन भी किया गया है।मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में समय को ध्यान में रखते हुए उसमें उत्पन्न संघर्ष और द्वंद्व को चित्रित किया है। इनकी रचनाओं ‘स्मृति दंश’(1990), ‘बेतवा बहती रही’ (1993), ‘इदंन्मम’ (1994), ‘चाक’

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

(1997), 'झूलानट' (1999), 'अल्मा-कबूतरी' (2000)। 'अगनपाखी विजन' (2002), 'कबूतरी कंडुल बसै' (2002), 'कही ईसुरी फाग' (2006) मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में स्त्रियाँ विषम परिस्थितियों में सफलतापूर्वक संघर्ष करके अपने वर्चस्व को स्थापित करती है। ये स्त्रियाँ अपने अधिकारों के प्रति संघर्ष और द्वंद्व के प्रति पूर्ण रूप से सजग हैं।इस सृष्टि का शाश्वत सत्य है।[21] प्रकृति में विभिन्न स्तरों पर यह संघर्ष निरंतर चलता रहता है। प्रकृति के अनमोल रत्न मानव का जीवन भी संघर्ष का ही दूसरा नाम है। मानव जीवन में संघर्ष विभिन्न रूपों पर दिखाई देता है। इसे हम भीतरी एवं बाहरी, शारीरिक एवं मानसिक आदि वर्गों विभक्त कर सकते हैं। बाहरी एवं शारीरिक संघर्ष के अंतर्गत मनुष्य सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, भाषिक आदि जैसे विभिन्न स्थितियों से जूझता रहता है। वहीं दूसरी ओर उस के मन के भीतर ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार, स्वार्थ जैसे नकारात्मक भावों और दया, प्रेम, करुणा, परोपकार सहयोग जैसे सकारात्मक भावों में निरंतर संघर्ष चलता रहता है।[22]

नयी कविता प्रमुख हस्ताक्षर श्री जगदीश गुप्त के शब्दों में -

"सच हम नहीं, सच तुम नहीं
सच है महज संघर्ष ही।"

द्ंवद्व भी मानव जीवन की एक अनिवार्य स्थिति है। द्ंवद्व का संबंध अवसरों पर मानव द्ंवद्व या दुविधा ग्रस्त हो जाता है। वह सही-गलत, उचित-अनुचित सार्थक-निरर्थक कर्ण करणीय-अकरणीय का निर्णय नहीं कर पाता। वह दो पाट के बीच फंसे गूँहे के दाने के समान हो जाता है। जो चाहकर भी साबुत नहीं बच पाता।उपन्यास 'अगनपाखी' में मैत्रेयी पुष्पा ने नायिका भुवनमोहिनी के माध्यम से संघर्ष की स्थिति को उभारा है। भुवन मोहिनी का विवाह आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण मानसिक रूप से पागल लड़के के साथ करवा दिया जाता है। भुवन मोहिनी के पिता की मृत्यु के बाद माँ अपनी आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए विक्षिप्त लड़के से भुवन-मोहिनी का विवाह तय कर देती है। इस बात का पता भुवन को नहीं था ना ही उस से पूछा गया। सुसराल जाने के बाद उसे इस बात का पता चलता है तो वह दोबारा सुसराल जाने से मना कर देती है। यही से उस के संघर्ष की स्थिति जन्म लेती है। नायिका कहती है कि "ये गहने धरो चाहे लौटा दो, लाखों के होगें। पर एक खरी बात सुन लो, भले टका की सही। मैं वहाँ जाने वाली नहीं।"[23]

तेरी नानी सकते में आ गयी, बोली-काए, काए नहीं जाएगी सासरे?

भुवन ने माँ की आँखों में आँखें डालकर कहा – "पता है तुम्हें, पर मेरे मुँह से सुन लो, वह सिर्री है, पागल।"[1]

भुवन मोहिनी शुरू से ही हिम्मती, जागरूक लड़की के रूप में प्रस्तुत की है। लड़की होने का उसे कोई अफसोस नहीं है। वह अपने सभी कार्य आत्मविश्वास से पूर्णतः पूर्ण कर लेती है। मैत्रेयी पुष्पा ने नायिका भुवनमोहिनी में जो आत्मविश्वास को दिखाया है। भुवनमोहिनी का विश्वास से पूर्ण रूप देखते ही बनता है। जब वह कहती है कि "वह आगे बढ़ आई। सफेद दांत निकालकर हँस ती हुई बोली – बढ़ आगे, मैं तेरे बैलों को रोक लूँगी। कहकर भुवन ने दोनों बैलों के सींग पकड़ लिए । और ऐसे देखा जैसे गाड़ी न रोकी हो, हमें रोक दिया हो।"[2]उपन्यास में भुवनमोहिनी अपने अधिकारों के प्रति समर्थन को व्यक्त करती दिखाई देती है। वह विवाह को भी प्रमुख अधिकारों में से एक अधिकार मानती है। शारीरिक व मानसिक रूप से सही व्यक्ति से विवाह करना उसका अधिकार है। अयोग्य पुरुष के साथ विवाह करने से अच्छा उसे छोड़ देना ही स्त्री के हित में है। भुवन भी पागल पति के साथ अपना जीवन खराब करने से अच्छा उसे छुटकारा पा लेना ज्यादा बेहतर मानती है।"और भुवन पूछ रही थी", "अम्मा ब्याह करना पाप नहीं तो ब्याह छोड़ना क्यों पाप है? तुम अपने ऊपर पाप मत चढ़ाओ, तुम्हें तो वर के बारे में कुछ पता ही नहीं था। अब मैं अपनी अक्ल के हिसाब से जो भी करूँ। नरक स्वर्ग मेरे लिए बनेगा।"[3]

(भुवन) वह किसी बात से घबराती नहीं है। हर बात, वह कार्य करने की क्षमता व जिज्ञासा उसमें पूर्णतः है। शक्ति और साहस में लड़कों के समान है। वह इसीलिए दबकर नहीं रह सकती क्योंकि वह स्त्री है। उसे कोई कुछ भी कहता है तो उस के प्रति वह अपनी प्रतिक्रिया दिखाए बिना नहीं रहती है।

"अपनी भुवन कैसी ताकतवर बेटी थी। वह यहाँ बाग के मालिक और मुखिया के नाती बेटा उस से थर्राते थे। याद है वह किस्सा मुखिया के नाती की छाती पर लात...."[4]स्त्री को मात्र जरूरत की वस्तु न मानकर, उसे इन्सान समझना ही स्त्री का समर्थन करता है।[24]

'अगनपाखी' में नायिका भुवन अपने हक के लिए भी लड़की हुई दिखाई पड़ती है। अपने जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए वह जमीन-जायदाद में भी अपनी दावेदारी के लिए अर्जी दे देती है -

"कचहरी से अर्ज है कि अपने पति की जायदाद का हक मुझे सौंपा जाए । मैं कुँवर अजय सिंह की हकदारी पर सख्त एतराज करती हूँ।"[5]

उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' में मैत्रेयी पुष्पा ने स्त्री को अनेक प्रकार के संघर्षों के गुजरना पड़ता है, पीड़ाएँ सहनी पड़ती है, इतना सब होने पर भी वह अपने पुत्र को शिक्षा दिलवाती है।

"विद्या का दामन थामा है तो बेबसी और बदंरगतों (विद्या) से गुजरना होगा। माँ के घावों पर जैसे रामसिंह की छोटी-छोटी उँगलियों ने स्याही लेप दी हो। कटे-फटे बदन के चलते भी मोरनी-सी नाची फिरती। समय जाँच रहा था - औरत में कितनी ताकत है।

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

भूरी समझ रही थी, बेटे का उजाले-भरा रास्ता माँ की देह से गुजर रहा है।"[6]नायिका 'अल्मा' अपने पिता की इच्छा पूरी करते-करते निरन्तर शोषित और पीड़ित होती गई। पिता के सपने के कारण वह अपने आपको अपने अस्तित्व को मिटाती-बर्बाद करती चली गई।उपन्यास 'इदन्नमम्' में पात्र कुसुमा अपनी वैवाहिक जीवन से खुश न होकर स्वयं अपने ससुर को अपने जीवन साथी के रूप में चुनती है। कुसुमा तर्क देती हुई कहती है कि पति के घर में यशपाल से संबंध बना ही नहीं तो फिर इस घर में कोई भी संबंध किसी से नहीं मेरा। वह पूर्ण रूप से अपने संघर्ष को दर्शाती हुई कि उस ने जो भी किया ठीक किया है।"रही हिस्सा-बाँट की बात, सो निसाखातिर रहां, हम तुम्हारा कुछ नहीं बँटायेंगे। हमारे कुँवर के पिता का तो तुम्हारे हिस्से से कई गुना बड़ा हिस्सा है, घर मैं और खेत मैं। फिर छोटे हिस्से पर क्यों जायेंगे हम?"

"कस्तूरी कुण्डल बसै", मैत्रेयी पुष्पा का आत्मकथात्मक उपन्यास है। इसमें लेखिका ने अपनी जीवन से जुड़ी हुई घटनाओं को प्रस्तुत किया है। लेखिका ने इस उपन्यास में अपनी माँ कस्तूरी के जीवन संघर्ष को दिखाया है। यह उस समय की बात है जब स्त्री का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था। उन्हें धान का पौधा कहा जाता था कहने का तात्पर्य स्त्री का जहाँ जन्म होता है और दूसरी जगह जहाँ उसे शादी कर भेज दिया जाता है। तब उसे वहाँ पूर्ण रूप से अपने आप को व्यवस्थित करना पड़ता है। कस्तूरी इन बातों से सहमत नहीं थी कि स्त्री का जीवन का आधार यही है कि शादी करे, बच्चे पैदा करे, खाये-पीये और पूर्ण रूप से अपने आप को उस वातावरण में ढाल लें।[25]"मैं धान का पौधा हूँ" सोचकर वह हँस पड़ी। अनपढ़ अज्ञान भाभी खुद धान का पौधा बन गई है। यहाँ रुपने की शर्त में चाँदी-सोना माँगती है। यही है औरत की जिंदगी का सार।"[7]उपन्यास में लेखिका ने अपने दृष्टिकोण से स्त्री की इच्छा का कोई महत्व नहीं है? कस्तूरी की इच्छा के विरुद्ध उसका विवाह कर दिया जाता है। जब उसे इस बात पर पता चलता है कि उसका विवाह विक्रय करके हुआ है तो वह आक्रोश और पीड़ा से भर जाती है।"हम तो सोच रहे थे नई छोरी की तरह शरमा रही है, पर तू तो जोर आजमा रही है। तेरे भइया ने खनखनाते चाँदी के कलदार वसूले हैं, मुफ्त में नहीं आई सो नखरे पसार रही है।"[8]

कस्तूरी ने समाज की परवाह करे बिना अपने ससुर से बातचीत आरम्भ कर दी। नए से अपनी पढ़ाई आरम्भ की। कस्तूरी प्रतिदिन बैग लेकर गाँव से ढाई कोस दूर इगलास के स्कूल में जाने लगी।

"स्कूल जानेवाली झोला लटकाए औरत को भौंचक होकर सबने देखा। वह इस कदर परेशान हुई कि किसी को तो क्या, रास्ते के कंकड़-पत्थर और चढ़ाव-उतार तक न देख पाती।"[9]लेखिका ने स्त्री की सुरक्षा को महत्व दिया है। लेखिका ने असुरक्षा के भाव को स्वयं अनुभव किया है। इसे स्वीकार भी किया है कि स्त्री के अनेक संघर्षों में एक संघर्ष अपनी सुरक्षा के लिए होता है।"भागते-भागते, बचते-बचते सारी ताकत छिन गई, अब वह निखालिस थकान पर है।"[10]

कस्तूरी अपनी बेटी को समझाती है कि अनपढ़ औरतों की तरह सोना-चांदी आदि जेवरों पर विश्वास व लालस मत दिखाना विद्या ही असल में पूंजी है।"लिखा है - जेवर मत लाना, उनकी रखवाली कौन करेगा? चाँदी-सोने के छल्ला-चेन अनपढ़ औरतों के लालच होते हैं, उसे ही पूँजी समझती है। तू पढ़ी-लिखी है। सनद सर्टिफिकेटों की मालकिन। विद्या का खजाना तेरे हाथ है।"[11]'कहीं ईसुरी फाग' उपन्यास की नायिका ऋतु के पिता की मृत्यु के पश्चात् भी वह इतना पढ़ लिख पायी।[26] ऋतु और उसकी माँ ने कभी भी परिस्थितियों से समझौता नहीं किया अपितु सदैव संघर्ष ही किया। वह अपनी बेटी को शिक्षा दिलवाकर उसे उच्च शिखर पर देखना चाहती थी।"मेरी बेटी तो रिसर्च कर रही है। पीएच.डी. के लिए रिसर्च"[12]

उपन्यास 'चाक' मैं न्याय के लिए संघर्ष की कथा है। नायिका रेशम और उस की फुफेरी बहन का रिश्ता एक ही जगह होता है। किन्हीं कारणों से रेशम के पति की मृत्यु हो जाती है। और रेशम विधवा होने के बाद गर्भवती होती है। सास के सभी आग्रहों को ठुकराने के बाद उस की बहन अपने घर आने को कहती है। किन्तु वह मना कर देती है। रेशम की मृत्यु करवा दी जाती है। सारंग उसे न्याय दिलवाना चाहती है उसे पता है कि वह मृत्यु नहीं हत्या है।"काश यह मौत होती। मगर यह हत्या। पतित स्त्री, गर्भिणी औरत की हत्या।"[13]'चाक' उपन्यास की नायिका सारंग की बहन की हत्या ससुराल वाले कर देते हैं। सारंग उन सबको सजा दिलवाने के लिए संघर्ष करती है। वह यह भी चाहती है इस सब मैं गाँव वाले उसका साथ दें। "मेरे ससुर गजाधर सिंह, चचिया ससुर खूबराम, ग्राम प्रधान फतेसिंह, पुराने जमींदार नंबरदार, ग्रामसेवक भवानदास, पंडित चरनसिंह से लेकर ऊंची-नीची कौमों के तमाम बूढ़े-बड़े मासूम क्यों रह गए? इनकी जिह्वा क्यों लकड़ा गई? "[14]'झूलानट' में मैत्रेयी पुष्पा ने उपन्यास की नायिका शीलो साधारण स्त्री है जो गाँव में रहती है। नायिका शीलो परिस्थितियों के आगे घुटने नहीं टेकती बल्कि उसका सामना करती है। शीलो अपने वैवाहिक जीवन से खुश नहीं है क्योंकि उसका पति हमेशा उस की उपेक्षा करता रहता है। पति का मन परिवर्तित करने के लिए निरन्तर संघर्ष करती है।[27] वह अनेक तप, जप करके उस के मन में अपना स्थान बनाना चाहती है लेकिन सभी प्रयास विफल हो जाते हैं। धीरे-धीरे वह अपने आपको घर के अन्य कार्यों में मन रमा लेती है। अब वह पति के प्रति प्रेम-भाव न होकर बल्कि अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करती है। अब वह घर के पूरे कर्तव्य व अधिकार को अपने हाथ में ले लेना चाहती है।"बछिया करा देतीं, तो यह सींग पैना कर खड़ी हो आती! छोटा सा पशु ही इस को बेदखल कर देता सारे हक से। पूरा गाँव गवाह होता ---- पर अम्मा, दो-चार हजार रुपय का लोभ करके तुमने हमें चित्त कर दिया। अरे! मुझसे सवाल करतीं, तो मैं भेज देता। अब भुगत लो, लाखों की जायदाद पर दाँत गाड़े बैठी है"[15]

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

उपन्यास 'विजन' में नायिका नेहा शिक्षित युवती है। नेहा आँखों की डॉक्टर है। परिवार में पति और ससुर भी इसी व्यवसाय से संबंधित है। पति और सुसर ने मिलकर अपना 'आई सेंटर' भी खोल रखा है जिसका महत्व केवल अपनी जेबें भरना है। नेहा इस बात पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करती है तो वह उस के लिए अनेक रूकावटें पैदा करते हैं। नेहा अपनी परिस्थितियों से समझौता तो कर लेती है पर उसका संघर्ष जारी रहता है -"मैं अकेली रह गई, निपट अकेली ---- इस घर में न मुड़ने वाले कानून, इस घर की मालकिन के मितभाषी, कठोर नियम, इस घर के बेटे का संस्कारित व्यक्तित्व शौर शरण आई सेंटर को वारिस के वारिस की जरूरत, एक चक्रव्यूह बन गया आभा दी, नेहा ने सजरी के कितने ही दाँवपेंच, स्टैप्स और रुल्स सीखे हों, इस व्यूह के भेदन में अभिमन्यु की तरह ही मारी गई।"[16]

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने सभी उपन्यासों में स्त्री पात्र के जीवन में आई स्थिति-परिस्थिति, घटनाओं में द्वंद्व को चित्रित किया है।उपन्यास 'अगनपाखी' में चंदर की नौकरी ठाकुर अजय सिंह के सतत प्रयास द्वारा लग जाती है। इसके बदले वह अपने भुवन का विवाह अजय सिंह के भाई से करवा देते हैं। माँ बड़े पैसों के चक्कर में भी आकर भुवन का विवाह करवा देती है।[28] भुवन भीतर ही भीतर इस द्वंद्व से जूझ रही है। अपनी किस्मत को कोसते हुए कहती है कि जिससे प्यार करती थी उससे शादी नहीं हुई और जिससे शादी हुई है उससे मैं प्यार नहीं करती। वह अपने ससुराल में खुश नहीं है ना ही उनसे किसी भी प्रकार का समझौता नहीं कर पा रही है। ससुराल में सभी भुवन को समझाते हैं कि वह इस पागल को एक बच्चे की तरह समझ कर पाल लें, किन्तु भुवन को इस विषय में सभी बातें खोखली प्रतीत होती है।"अम्मा ब्याह के बाद बच्चा होने में भी नौ महीने लगते हैं, कोई पहले ही दिन से ही पूरे मर्द को अपना बच्चे कैसे मान ले? तुम लोगों की बातें मेरी समझ में नहीं आती। कैसे प्रतिव्रता धरम सिखाती हो? और इस धरम का मतलब मेरी समझ में क्यों नहीं आता?"[17]उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' की नायिका अल्मा का द्वंद्व घर की परिस्थितियों से संबंधित है। पिता का मृत्यु और प्रेमी से दूर हो जाने के कारण माँ अल्मा को समाज में रहने के लिए सभ्य व सुशिक्षित बनाना चाहती है। पिता की कामना थी कि वह अल्मा को पढ़ा-लिखाकर अपने जीवन को सही दिशा दें।[29]

अल्मा के पिता की मृत्यु पुलिस व सहयोगी कम्रचारियों ने की। अल्मा के मन में पुलिस व कर्मचारियों के प्रति घृणा व आक्रोश भरा हुआ था। अल्मा कहती है कि कबूतर होना कोई अपराध तो नहीं है पर इस अपराध की सजा मेरे पिता को क्यों मिली। अल्मां के मन में क्रोध ही उसका द्वंद्व बन गया है। वह अपने परिवार के प्रति हुए अन्याय के लिए प्रतिश् शोध लेना चाहती है जो सम्भवतः उस के लिए उत्तरदायी है -"आप जानते हैं मैं यहाँ क्यों रुकी हुई हूँ? आप समझते हैं कि मैं जिंदा भी क्यों हूँ? बड़ी सीधी बात है, आप लोगों ने मेरी दुनियाँ उजाड़ी है, मैं आप को उजाड़े बिना नहीं मरूँगी। मैं सबको बता दूंगी कि पाप कहाँ पलता है? अपराध कौन लोग करते हैं? सातने और मारने ठेकेदार कौन हैं? मेरे पिता ने इन्हीं बातों से समझौता नहीं करना चाहा था, पर इतना तो समझती हूँ कि हमारे लिए क्या गलत है, क्या सही? "[18]

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास 'कस्तूरी कुण्डल बसै' में अपने जीवन में घटी घटनाओं का चित्रण किया है। लेखिका जब 18 दिन की थी, पिता की मृत्यु हो गई। माँ कस्तूरी इस सदमे से उभर कर अपने आप को व्यवस्थित करने में निरन्तर प्रयास करती रहती।[30]"अब मैं अपनी जिंदगी और बेटी की नन्हीं जान को लेकर ही सोच पाती हूँ मुझे लोग धिक्कार रहे हैं, जानती हूँ धिक्कार किसे अच्छी लगती है? पर कैसे समझाऊँ कि मेरे सामने आने वाले दिन बाघ की तरह मुँह फाड़े खड़े हैं। मैं आने वाली घड़ियों से छुटकारा पाकर बच जाऊँगी? हर हाल में सामना करना पड़ेगा...."[19]

'झूलानट' की नायिका शीलो का द्वंद्व इस प्रकार से है। वह अपने मन में जिसे पति रूप में देखती है उस से उसका विवाह नहीं होता। जिससे विवाह होता है वह पति उसे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार नहीं करता है।शीलो का पति पेशे से पुलिस में है। शीलो का रूप-सौन्दर्य साधारण है तथा दायें हाथ में छः अंगुलियाँ हैं सास के समझाने पर वह अपने पति को खुश रखने की कोशिश भी करती है। बार-बार उपेक्षा झेलते हुए वह द्वंद्व में घिरी रहती है।पति सुमेरु के दूसरे विवाह का सुनकर वह आक्रोश व द्वंद्व में आकर अपनी छठी उंगली काट लेती है।"वो पता नहीं, मन-ही-मन किन भावनाओं से लड़ रही थीं? क्या मालूम कि क्या इतने गहरे खंदक में फँसी, अपने-आप से ही लड़ रही थी? चेहरा उठाया, तो अनकही मुठभेड़ दर्ज थी होंठों पर, नाक पर, आँखों में। अंग-इन्द्रियाँ थक-हार गए हों जैसे।"[20]मैत्रेयी पुष्पा ने उपन्यासों के माध्यम से मध्य वर्गीय परिवारों में मूल्य-विघटन की स्थिति को चित्रित किया है। उपन्यासों में नारी अनेक संघर्ष व द्वंद्व से जूझती नजर आती है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी के वर्चस्व के साथ-साथ नवीन सोच, विचार, संघर्ष, द्वंद्व को दृष्टिगत किया है।[31]

परिणाम

मैत्रेयी पुष्पा के नए उपन्यास **'फरिश्ते निकले'** की संरचना एक लाक्षागृह सरीखी है। औरत के अपमान की कई कहानियां इसमें स्वरूप लेती हैं। लेकिन इन कहानियों की शक्ति यह है कि ये कोई साहसवंचित सहानुभूति नहीं उपजातीं। ऐसा इसलिए है क्योंकि ये अपने निष्कर्षों और बनत में बगावती हैं। यातनाएं इस उपन्यास में मौजूद नायिकाओं की अदम्य जिजीविषा, संकल्पों, संघर्षों, स्वप्नों और लड़ाइयों को कमजोर नहीं कर पातीं। वे एक रोज इस लाक्षागृह से बाहर निकलती हैं और इसमें आग लगा देती हैं। 'दि फीमेल

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

यूनॅक' से जर्मेन ग्रीयर के शब्द यहां मौके का उद्धरण होंगे कि ये नायिकाएं ***'पुराने प्रक्रम का नवीनीकरण नहीं करना है, उसे तोड़ना होगा'*** इस लक्ष्य के क्रियान्वयन का प्रतीक हैं।**उपरोक्त** अनुच्छेद के बाद प्रस्तुत उपन्यास की समीक्षा कुछ तात्कालिक हुआ चाहती है। बिलकुल नजदीक से गुजरे वक्त में इस समाज में मर्दानगी के कुछ ऐसे विकृत और नए नमूने सार्वजानिक हुए हैं जिन्होंने मनुष्यता को शर्मसार किया है। एक ऐसे दौर में जब आरोपियों [32]और दोषियों से ज्यादा प्राचीन हो गया है यह कहना कि बख्शा नहीं जाएगा, संवेदनशीलता सिर्फ शर्म से सिर झुकाकर रह जाती है। इन वहशी घटनाओं की— जिन्हें बार-बार बलात्कार कहकर संबोधित किया जाता है— जड़ें कहां हैं? इस पर विमर्श के लिए एक पूरा तंत्र विकसित हो चुका है जो प्रत्येक बलात्कार के बाद उपचारिक नहीं औपचारिक रूप से प्रस्तुत होता है। यह कहना कुछ अजीब लग सकता है, लेकिन बलात्कार की बेशुमार घटनाएं और उनसे संबंधित खबरें स्त्री-अस्मिता के मूल संघर्ष और स्वर को कमजोर कर रही हैं। समानता के शोर के बीच स्त्रियों को शत्रुओं की तरह रौंदते-कुचलते हुए पुरुषों की सोच बदल नहीं रही है, वे अपनी हैवानियत में अब भी निर्भय, असभ्य और बर्बर हैं :[33]

"मगर बात यह भी भूलने की नहीं है कि लड़कियां और औरतें इनसे शरीर में नुकीले सरिया फंसे होने के बावजूद लड़ती हैं। जब तक जान रहती है, वे सुस्त नहीं होतीं, मात नहीं खातीं। तभी तो हारकर इन दरिंदों को उन जांबाज लड़कियों की हत्या करनी पड़ती है।" **मैत्रेयी पुष्पा** की कथा-सृष्टि की नायिकाएं जांबाज रही आई हैं। 'दि सब्जेक्शन ऑफ विमेन' में आए जॉन स्टुअर्ट मिल के शब्दों में कहें तो कह सकते हैं कि इन नायिकाओं के लिए ***'नैतिकता की असली कसौटी है, बुराई को निरुत्साहित करने की क्षमता।'*** उन्हें घेरकर उनका बार-बार बलात्कार किया जा सकता है, उन्हें लहूलुहान किया जा सकता है, इसके बाद भी अगर वे बच गईं तब उन्हें जलील किया जा सकता है... बावजूद इसके ये नायिकाएं सतही और भावुकतापूर्ण ढंग से पेश नहीं आतीं— ये लड़ने, लड़ते रहने और जीतने की मिसाल कायम करने में यकीन रखती हैं।**'साइकोलॉजी ऑफ सेक्स'** के लेखक हैवलाक एलिस ने विवाह के कारण होने वाले बलात्कारों की संख्या को संख्या में दूसरे बलात्कारों से ज्यादा बताया था। लेकिन बेला बहू विवाह-संस्था के भीतर भी उत्पीड़ित हैं और बाहर भी। बेला बहू 'फरिश्ते निकले' की मुख्य किरदार हैं, लेकिन यह उपन्यास कुछ इस बनत का है कि इसमें किरदार में से किरदार में से किरदार... निकलते चले जाते हैं। इसके ही एक किरदार जुझार सिंह के शब्दों में कहें तो समझिए कि ***'अत्याचार, अन्याय और बलात्कार के सारे मॉडल यहां इकट्ठे हैं।'*** बेला की कथा के विस्तार में जाने से बचने के लिए यहां केवल यह कहा जा सकता है कि बेला के जीवन और फूलन देवी के जीवन में कई समानताएं हैं। लेकिन अपने मूल उद्देश्य में बेला का जीवन— ऐसी स्थितियों से ग्रस्त स्त्रियों के लिए— फूलन के जीवन से ज्यादा अनुकरणीय है :[34]

"बेला, फूलन देवी का किस्सा सुने या आपबीती दोहराए या कि आंखों से भस्म कर देने वाली, कई-कई हाथों से दुष्ट-दलन करने वाली दुर्गा का मनन करे? उसे पक्का विश्वास हो गया है कि देवी किसी मंदिर या मढ़िया में नहीं होतीं, वे बीहड़ घाटियों में रहती हैं फूलन बनकर। वे समाज में रहती हैं डायन बनकर, वे घरों में रहती हैं चुड़ैल बनकर और वे रसूखवालों के बीच रहती हैं बेला बनकर।"

बेला अपने अपमान की कहानियों को जलाने के बाद कानून के आगे आत्म-समर्पण कर देती है। जेल में उसकी मुलाकात फूलन देवी से होती है और उनसे उसे कुछ अचूक मंत्र मिलते हैं, जैसे :***"समाज को बागी औरतें ही बदल सकती हैं, 'भली' औरतों को मर्द गन्ने की तरह पेरते रहते हैं।"***

"मर्दों के पीछे दौड़ना छोड़ो औरतो, उनको अपने स्वाभिमान और सम्मान के पीछे दौड़ाओ। तुम मर्दों से ज्यादा योग्य हो क्योंकि जद्दोजहद के साथ हमदर्दी की मालकिन हो। मगर अपना गुस्सा पीने के लिए नहीं उगलने के लिए बचाकर रखो। औरत के गुस्से की आग में मर्दों के गुरूर और मालिकाना संस्कार भस्म हो जाएंगे।" [35]

जेल से रिहाई के बाद 'मैं कहां जाऊंगी अब?' यह सवाल बेला बहू के सामने सांप के फन-सा खड़ा हो जाता है। यहां आकर मशहूर ईरानी फिल्मकार जफर पनाही की ईरान में प्रतिबंधित रही आई फिल्म 'दि सर्कल' स्मृत हो उठती है। इस फिल्म की नायिकाओं का जीवन इतना नारकीय हो चुका है कि जेल की दुनिया उन्हें बाहर की दुनिया से बेहतर लगती है। यह फिल्म इस पड़ाव पर आकर खत्म होती है कि स्त्रियों के लिए असली जेल तो मर्दों की बनाई वह दुनिया है जिससे बगावत करने के जुर्म में उन्हें ये जेल नसीब हुई है। इससे मुक्त होने का तब तक कोई अर्थ नहीं है जब तक मर्दों की बनाई दुनिया से रिहाई नहीं मिलती, क्योंकि इस रिहाई के लिए फिर बगावत होगी और लौटकर फिर यहीं आना होगा। इस तरह गुलामी और कैद का एक वर्तुल पूरा होता है।[36]

लेकिन मैत्रेयी पुष्पा के माध्यम से अभिव्यक्त बेला की रिहाई उसे मर्दों की बनाई इस दुनिया में— वापस जेल की ओर नहीं— अपने ही जैसे सताए गए लोगों के बीच ले जाती है। इन लोगों का रिकार्ड शराफत से दूर रहने का रहा है। अजय सिंह ने सजा काटी है तो जुझार सिंह भी डकैती की ट्रेनिंग पाया हुआ छोटा डाकू है। बसंती घर से भागी हुई लड़की है, उसे डकैतों को खाना पहुंचाने का बहुमूल्य अनुभव है। गुलाब सरकारी कारतूसों का कुशल दलाल रहा है। उजाला, जिसके साथ बलात्कार हुआ, लोहापीटाओं की छोकरी है जो दो बलात्कारियों की मर्दानगी की चटनी बना आई है। इन सब किरदारों और इनसे भी जुड़े किरदारों का जीवट भरा जीवन इस उपन्यास को प्रेरणादायक और सकारात्मक प्रभाव में विन्यस्त करता है। बदलाव की उम्मीद के प्रति समर्पण के साथ शुरू हुआ यह

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

उपन्यास धीरे-धीरे बदलाव और उम्मीद की ओर बढ़ता है और अंत तक आते-आते अपने पढ़ने वाले को बदलाव और उम्मीद से भर देता है।**'उपन्यास लेखन पर उपन्यासकार के लिंग का क्या प्रभाव पड़ता है?'** इस प्रश्न पर थोड़ा गहराई से सोचते हुए 'ए रूम ऑफ वंस ओन' में वर्जीनिया वुल्फ कहती हैं, ***'केवल उपन्यास के विषय में सोचें तो यह ऐसी रचना दिखाई पड़ेगा जिसमें जीवन दर्पण की तरह दिखाई पड़ता है, हालांकि इसमें असंख्य सामान्यताएं और विकृतियां भी होती हैं। ...इसके मूल्य वास्तविक जीवन के मूल्य होते हैं। लेकिन यह स्पष्ट है कि स्त्रियों के मूल्य पुरुषों द्वारा निर्मित मूल्यों से प्रायः भिन्न होते हैं।'*** इस उद्धरण के आलोक में कहें तो कह सकते हैं कि मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासकार की रसाई स्त्री-अस्मिता के महत्वपूर्ण इलाकों तक है। वह इस दृष्टि को मूल्यनिष्ठ होकर कथा में कुछ इस कदर बसाने का हुनर जानती हैं कि वह वास्तविक यथार्थ से कतई विच्छिन्न नहीं होती। स्त्री को अपनी मिल्कियत समझने वाली पुरुष-मानसिकता के मूल्यों से मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासकार के मूल्य कैसे भिन्न हैं, इसकी नजीर के लिए प्रस्तुत उपन्यास के एक पुरुष किरदार अजय सिंह के हिस्से आए संवाद को उद्धृत करना पर्याप्त होगा :[37]

"अपने समाज में यह बात बड़े प्रामाणिक तरीके से सिद्ध की जाती है कि औरत अक्सर ही बड़ी हैसियत वालों, दौलतमंदों और बड़ी जाति वालों को अपनी जवानी का लालच दिखाकर फांस लेती है, जिसे वे नादान मोहब्बत समझ लेते हैं। मोहब्बत की बेड़ियां बड़ी कसावट वाली होती हैं। आदमी दिखाता है कि पुरानी आशनाई खत्म हो गई मगर भीतर ही भीतर उस पर कुढ़ता रहता है। यही कारण है कि इस इश्क के जोर का हथियार खानदान तक को नहीं छोड़ता। जाती दुश्मन हो जाते हैं मर्द नाम के इंसान। और तब ये औरतें अपनी जीत का आनंद लेती हैं। डंकिनी-शंखिनी, दूती, कुटनी औरतों की कहानियां ऐसी ही हैं।"

सती, देवी, पतिव्रता, आज्ञाकारिणी, अर्द्धांगिनी, अनुगामिनी... इन 'अच्छे-अच्छे' नामों का फरेब मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में बार-बार खुलता आया है। 'दि सेकेंड सेक्स' में सीमोन द बोउवार ने सेक्सुअलिटी को केवल अस्तित्व का एक पहलू भर बताया है। लेकिन मैत्रेयी पुष्पा की नायिकाएं सेक्सुअलिटी को अपनी मुक्ति का मार्ग मानती आई हैं। इस मार्ग में यह उपन्यास लेखिका की तरफ से इस नजरिए से भी नया है क्योंकि इसमें न केवल 'अच्छे-अच्छे' नामों का फरेब खुलता है, बल्कि सेक्सुअलिटी का फरेब भी खुलता है। इस तरह के खुलासों में लेखिका का यकीन इस वजह भी उल्लेखनीय है क्योंकि सारे युक्ति-तर्क इसका समर्थन करते हैं।

सीमोन ने ही 'दि सेकेंड सेक्स' में ***'स्त्रियों के बीच सामूहिकता की भावना का अभाव है'*** इस तथ्य को रेखांकित किया था। 'फरिश्ते निकले' इस तथ्य को धुंधला करता है। यह घृणित राजनीति और बुरे अर्थ में बदलते मूल्यों वाले एक पतित परिदृश्य में पारस्परिकता और स्त्रियों के बीच सामूहिकता की भावना को ऊंचाई देता है। मेहनत की तौहीन और हुनर की बेकदरी को इसमें पढ़ना और सहना आसान नहीं है, अपने असर में यह पाठ बेचैन कर देने वाला है। लेकिन इसके बीच ही यह एकजुटता और परोपकार की जरूरत भी समझता है। यह अब्राहम लिंकन की इस बात को उद्धृत करता है कि ***'गुंडों से डर मत जाना क्योंकि उनको झुकाना सबसे आसान होता है'*** और अंत में उनके मशहूर 'प्रधानाध्यापक के नाम पत्र' से समाप्त होता है, यह कहना गलत होगा क्योंकि महत्वपूर्ण कृतियां जहां खत्म होती जान पड़ती हैं, दरअसल वहीं वह आधारभूत शुरुआत होती है जो पाठकों का हृदय छू लेती है।[38]

निष्कर्ष

आत्मकथा में सब कुछ सत्य नहीं होता बल्कि इसमें कल्पना की भी भूमिका होती है। आत्मकथा या साहित्य में लेखक का 'मैं' बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। यह 'बहुआयामी होता है। उसी तरह लेखिका की आत्मकथा में 'मैं' का एक ही रूप नहीं होता। बल्कि बहुआयामी 'मैं' होता है। मैत्रेयी पुष्पा के पास एक लेखिका का 'मैं' है। साथ ही एकयुवा छात्रा,बिंदास युवती, परंपरागत पत्नी और माँ का भी 'मैं' है। आमतौर पर हिन्दी में लेखक के 'मै' पर जब भी बातें हुई हैं तो उसके एकल रूप की चर्चा हुई हैं। खासकर छायावादी लेखकों के संदर्भ में जो बहस चली है वह लेखक के एकल 'मैं' पर केन्द्रित है। रामविलास शर्मा से लेकर नामवर सिंह तक सबके नजरिए में छायावाद के लेखक का एकल 'मैं' है।यह 'मैं' के प्रति असंपूर्ण नजरिया है। इसके कारण एकल 'मैं' की स्टीरियोटाइप समझ बनी है। 'मैं' महज भावों की अभिव्यक्ति नहीं है बल्कि उसकी अस्मिता की भी अभिव्यक्ति है। इसमें व्यक्ति और समाज, समुदाय और व्यक्ति, लिंग और साहित्य घुले-मिले होते हैं। इसी तरह एक ही पाठ में लेखिका की जेण्डर पहचान के अंदर अनेक अस्मिताएं होती हैं जिनसे अस्मिता का उप-पाठ बनता है।[39]'मैं' के बहुआयामी रूपों को खोलने से उसके विभिन्न स्थितियों में विभिन्न भाव नजर आएंगे। मसलन् मैत्रेयी पुष्पा के छात्रा के रूप में जो 'मैं ' है उसमें मातहत भाव नहीं है। लेकिन पत्नी रूप में मातहत भाव है। छात्रा के अंतर्विरोध और पत्नी के सामाजिक अंतर्विरोध अलग किस्म के हैं। यानी आत्मकथा या साहित्य पढ़ते समय हमें व्यक्ति के अंदर व्यक्ति की खोज करनी चाहिए। किसी भी व्यक्ति में एक नहीं अनेक व्यक्ति होते हैं।मैत्रेयी पुष्पा ने पत्नी भाव के बारे में लिखा है " मगर पत्नी की भूमिका। एक पतिव्रता!पति को क्या चाहिए,यह भी जानती थी। मन से ज्यादा तन का समर्पण और उसकी मौन आवृत्ति,कम नहीं,ज्यादा से ज्यादा करनी होती है। इसमें छल छद्म के लिए जगह नहीं। जैसे विवाहित जीवन की यही कसौटी हो । मैं संयत सन्तुलित सी स्त्री, जिसके लिए यह समय सन्तोष और आनन्दभरा था, क्योंकि देह-उत्तेजना अभी आदत में शुमार नहीं हुई थी। डॉक्टर साहब के लिए प्रेम का ,आकर्षण

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

का, दाम्पत्य का और स्त्री –पुरूष के मानसिक और शारीरिक सम्बन्ध का अर्थ एक ही है। नहीं तो उनके गुस्से का उबाल ऐसा क्यों होता कि देह का द्रव विष हो जाए।'[1] यह एक मातहत 'मैं' है।जिसकी कल्पना स्वयं लेखिका कर रही है।पत्नी की अवस्था से भिन्न अवस्था में एक स्त्री के नाते जब सोचती हैं तो उसका 'मैं' कुछ और सोचता है। लिखा है, " बस ये लोग नहीं समझना चाहते कि बन्धन मुझे रास नहीं आते। बन्धनों में मैं छटपटाने लगती हूँ।"आरंभ में लेखिका जी रही है पत्नी के रूप में और जीना चाहती है एक स्त्री के रूप में, और यहीं पर उसके अंदर छिपे कई 'मैं' सामने आते हैं। कहने का आशय यह है कि लेखिका की आत्मकथा पढ़ते हुए उसके अंदर छिपे विभिन्न किस्म के 'मैं' की तलाश की जानी चाहिए। प्रत्येक 'मैं' का संबंध भिन्न किस्म के विचारधारात्मक विमर्श के साथ है।[40] प्रत्येक 'मैं' का समाज और नैतिकता के साथ भिन्न किस्म का संबंध है।लेखिका का पार्टी में नाचना या डाक्टर सिद्धार्थ के साथ हंसकर बातें करना,पति के साथ बातें करना ये दो भिन्न किस्म की नैतिकता को सामने लाते हैं। व्यक्ति एक है, लेकिन उसके 'मैं' का समाज और नैतिकता से अलग किस्म का रिश्ता है।यहां नैतिकता के आधार पर भिन्न किस्म की अस्मिता भी बन रही है।खास किस्म की व्यक्तिगत अस्मिता भी बन रही है। इस क्रम में विभिन्न किस्म की अस्मिता, उनके साथ जुड़ी नैतिक मान्यताओं और सामाजिक संस्थानों की भूमिका की ओर भी लेखिका ने ध्यान खींचा है। यानी मैं,अस्मिता और नैतिकता का एक मूल्य त्रिकोण बनता है जो लगातार यह संदेश देता है कि अस्मिता के निर्माण में नैतिकता एक तरह से एजेण्ट की भूमिका अदा करती है। लेकिन इस नैतिक एजेण्ट को उसके ऐतिहासिक-सामाजिक संदर्भ के बिना समझना संभव नहीं है।[40]

नैतिक एजेण्ट के ऊपर मैत्रेयी के यहां उनकी निजी इच्छाएं प्रबल हैं। वह नैतिकता के सवालों से इच्छा के आधार पर खड़े होकर चुनौती देती है। इस प्रसंग में वे अंश बेहद सुंदर हैं जहां पर लेखिका मन ही मन अपनी बात कहती है। लेखिका का इस प्रसंग में आत्मालाप बहुत ही महत्वपूर्ण पहलुओं को सामने लाता है। इस तरह के चित्रण के बहाने लेखिका ने पुंसवादी मूल्यों और नैतिक मान्यताओं को सीधे चुनौती दी है। स्त्री की चुनौतियों को दो स्तरों पर देखा जा सकता है। पहला ,उसके आत्मकथन और आत्मालाप, दूसरा , इच्छा व्यक्त करने या उसके आधार पर एक्शन में। स्त्री के एक्शन उसके प्रतिवादी रूप को व्यक्त करते हैं। मसलन् मैत्रेयी का अचानक डा. सिद्धार्थ के साथ नाचना स्वयं में पुंसवाद के खिलाफ प्रतिवाद है। इस प्रतिवाद या नाचने के दौरान लेखिका के मन में क्या घटा वह पढ़ें ,लिखा है ,' डॉक्टर सिद्धार्थ!मेरा हाथ पकड़कर उठाते हुए।पता नहीं कितना अपनत्व था,कितनी चुनौती थी ?या परीक्षाकाल दोनों का ?हाथ पकड़कर खींचनेवाला मीत... मैंने अनुमति के लिए पति की ओर देखा नहीं। अपना निर्णय अपने हाथ में ले लिया, खतरों के बारे में सोचा नहीं।मैं नाच रही थी किसी के साथ-साथ, अनगढ़ और आदिम सा नाच...जैसे मेरे जीवन मूल्यों का हिस्सा यह भी हो। जब-जब मेरा पाँव डा.सिद्धार्थ के पाँव पर पड़ जाता, वे मुस्कराकर मुझे सँभाल लेते। यह परिचय का अगला चरण,उस जानकारी का मुझे कोई इल्म न था।"मैत्रेयी पुष्पा ने जब डा.सिद्धार्थ के साथ नाचने के लिए कदम उठा दिए तो वे अपनी ज्ञानात्मक संवेदना,जिसमें पति रहता है,का अतिक्रमण करती हुई समाजशास्त्र में प्रवेश कर रही थीं और एक नए किस्म के सामाजिक विवाद को जन्म दे रही थीं, साथ ही अपने को भी नए सिरे से परिभाषित करने की कोशिश कर रही थीं। यहां पर उनकी निजी अस्मिता दांव पर लगी थी। इस क्रम में वह जहां अपनी पत्नी की अस्मिता के बने-बनाए साँचे को तोड़ रही थीं और अपने पति के मन में संशय पैदा कर रही थीं. टकरावों को जन्म दे रही थीं दूसरी ओर वे नैतिकता के प्रचलित मानकों को भी तोड़ रही थीं। ये दोनों क्रियाएं लेखिका के जीवन में नैतिकता की प्रगतिशील निरंतरता को बनाने में मदद कर रही थीं। इस क्रम में लेखिका के लिए मूल्यवान था उनका मन संतोष और इच्छा की संतुष्टि। उन्हें यह चिन्ता ही नहीं थी कि 'अन्य' क्या सोच रहे हैं ? उनके पति क्या सोच रहे हैं?लेखिका के मन में नाचने के बाद किस तरह मानसिक तूफान उठा था इसका सुंदर चित्रण किया है। लिखा है ' जो लोग इलजाम लगा रहे हैं , उन्हें जाकर बता दो कि शादी के बाद मुझे मेरे हिसाब से कारावास मिला है,जिसके लौह-कपाट मैं तभी से तोड़ने में लगी हूं और देखना चाहती हूँ कि इस दुनिया के अलावा भी कोई दुनिया है ? पति के अलावा कितने लोग हैं बाहर ? वैसे पति से बैर भाव नहीं पाला ,मगर उनके किसी खूँटे से बँधना ? ... मैं भी अपने अन्दर भावनाएँ रखती हूँ,जैसे कोई गुप्त प्यार को बचा ले। नाचने की स्मृति मेरे साथ रहेगी।'यहां पर मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी वैयक्तिकता को केन्द्र में रखकर नैतिकता को चुनौती दी है साथ ही आत्म-नजरिए से वे चीजों को नई व्याख्या दे रही हैं। वे जब नैतिकता को चुनौती दे रही हैं तो वे यह भी रेखांकित कर रही हैं कि नैतिकता के जो रूप प्रचलन में हैं खासकर स्त्री के संदर्भ में, वे स्त्री के मन या इच्छा को नहीं देखते। नैतिकता की सारी कसौटियां स्त्री के मन या इच्छा को बाहर रखकर तय की गयी हैं। यह असल में स्त्री का गतिशील 'मैं' है। इस गतिशील 'मैं' के आधार पर जब कोई व्यक्ति सोचता है तो वह जहां एक ओर आत्म और उससे जुड़ी नैतिकता को पुनर्परिभाषित करता है वहीं दूसरी ओर व्यक्ति को एक नैतिक मनुष्य के रूप में देखने की स्थितियों को भी चुनौती देता है और स्त्री के लिए वैकल्पिक नैतिकता की तलाश आरंभ कर देता है।मैत्रेयी पुष्पा यह भी रेखांकित करती है कि मेरी पहचान को उन चीजों के आधार पर परिभाषित किया जाए जो मेरे लिए महत्वपूर्ण हैं। यानी स्त्री की अस्मिता को स्त्री के लिए जो मूल्यवान है उसके आधार पर परिभाषित किया जाए। इस क्रम में स्त्री की भाषा रचती है और उसके जरिए स्त्री की पहचान को निर्मित करती हैं। मैत्रेयी जब अपने आत्म को परिभाषित करती हैं तो वे अपने आसपास के वातावरण और संबंधियों-मित्रों आदि के संदर्भ में परिभाषित करने की कोशिश करती हैं।[33]

आत्म को उसके आसपास के वातावरण के संदर्भ में ही परिभाषित किया जा सकता है। इस क्रम में वे बताती हैं कि वे क्या हैं ? किस धरातल पर खड़ी होकर बोल रही हैं ? परिवार में कौन-कौन हैं ?किस तरह के सामाजिक वातावरण में जी रही हैं ? वह सामाजिक भूगोल कैसा है जिसमें जी रही हैं।जब भी कोई स्त्री अपनी आत्मकथा लिखती है तो वह निजी कथा के साथ स्त्री की सामाजिक कथा भी लिख रही होती है।फलतःआत्मकथा स्त्रियों की सामुदायिक व्यथा-कथा का रूप ग्रहण कर लेती है।आत्मकथा में आए नैतिकता के एजेण्टों की

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

सही ढ़ंग से पड़ताल करने की जरूरत है। स्त्रीचेतना के स्तर को जानने और उस पर नैतिकता के दबाबों को जानने में यह तथ्य खोजना चाहिए कि आखिरकार नैतिकता पर किससे संवाद हो रहा है अथवा किससे विचारधारात्मक संघर्ष चल रहा है। क्योंकि नैतिकता को उसके संवादियों को जाने बिना खोला नहीं जा सकता है। अनेक मर्तबा नैतिकता का स्वरूप आत्मालाप और आतामानुभूति में व्यक्त होता है। लेकिन अनेकबार नैतिकता की स्थितियां अन्य से संवाद करते हुए सामने आती हैं। खासकर ऐसे लोगों से बातें करते हुए सामने आती हैं जिनके सामाजिक-ऐतिहासिक विवरण और ब्यौरों को पाठक जानता है।नैतिकता के प्रसंग में हमेशा यह तथ्य ध्यान रहे कि अंतर्मन में बैठे नैतिक मूल्य कभी तटस्थ नहीं होते। न वे तटस्थ भाव से मन में प्रवेश करते हैं और न तटस्थ रहने देते हैं। नैतिकता के दायरे और सरोकारों को सिर्फ सवालों के दायरे तक सीमित करके नहीं देखना चाहिए।बल्कि यह देखें कि नैतिकता के सामान्य लक्षण किस तरह व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। इस प्रसंग में व्यक्ति को समग्रता में देखना चाहिए और उसके संदर्भ में ही उसके आत्म की परीक्षा की जानी चाहिए। यानी लेखिका को 'मैं' को समग्र के अंश के रूप में देखना चाहिए। समग्र से काटकर लेखिका के 'मैं' को देखने से चीजें साफ ढ़ंग से समझ में नहीं आतीं।यह समग्र जेण्डर और समुदाय दोनों से बना है।इसका अर्थ यह है कि साहित्य का इतिहास पढ़ाते समय जब दलित या स्त्री आत्मकथा पर बात की जाय तो समुदाय,लिंग और जाति के आधार पर बातें की जाएं। इस परिप्रेक्ष्य में देखें तो मौजूदा दौर समुदाय और साहित्य के अन्तस्संबंध के आधार पर पढ़ने या विश्लेषित करने की मांग करता है। हमारे आलोचकों ने अभी तक साहित्य और समुदाय के अंतस्संबंध पर सोचा ही नहीं है। वे तो साहित्य और वर्ग, साहित्य और समाज के आधार की ही चर्चा करते रहे हैं। यानी साहित्य और समुदाय का अन्तस्संबंध एक नए पैराडाइम को जन्म दे रहा है। इस पैराडाइम के लक्षणों की विस्तार में जाकर पड़ताल करने की जरूरत है।स्त्री- आत्मकथाओं में नैतिकता के सवाल महत्वपूर्ण हैं। इनके बारे में हमें पद्धति और शास्त्र दोनों ही स्तरों पर स्पष्ट समझ से काम लेना होगा। नैतिकता के मानकों को दिखाकर आमतौर पर स्त्री को अधिकारहीन बनाने की कोशिश की जाती है और उसे सार्वजनिक जीवन में अपनी स्वायत्त जगह बनाने से रोका जाता है।इस परिप्रेक्ष्य में मैत्रेयी पुष्पा की सामाजिक स्थितियों और उनके इर्दगिर्द बुने हुए नैतिक मानकों को देखा जाना चाहिए। नैतिकता के तानेबाने को समग्रता में देखते हुए मैत्रेयी पुष्पा ने लिखा है , ' बन्धन मुझे रास नहीं आते।बन्धनों में मैं छटपटाने लगती हूँ।' यह कमोवेश प्रत्येक भारतीय स्त्री की स्थिति है।हिन्दीभाषी औरत कैसे जीती है और उसके चारों ओर किस तरह की घेराबंदी है , उसके अनेक चित्रों का विस्तृत विवरण मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी आत्मकथा में दिया है। फलतः आत्मकथा में जेण्डर यानी लिंग और समुदाय की अवधारणा केन्द्र में चली आई है। अब आत्मकथा पढ़ते हुए आप एक लेखक की आत्मकथा नहीं पढ़ रहे बल्कि एक स्त्री और एक समुदाय का आख्यान पढ़ रहे हैं। आत्मकथा में एक स्त्री या एक दलित का प्रतिवाद या छटपटाहट या बेचैनी निजी होने के साथ साथ सामुदायिक भी है।यानी रचना में एकाधिक प्रतिवादी इमेजों को हम पढ़ते हैं। ये दोनों चरित्र (निजी चरित्र और सामुदायिक चरित्र) एक-दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा करते नजर आते हैं। इसके कारण आत्मकथा में एक साथ अनेक आख्यान चलते रहते हैं। अतः इस तरह के प्रतिवादी चरित्रों को एक महाख्यान में बांधना संभव नहीं है। कहने के लिए यह एक औरत की कहानी है लेकिन इसमें अनेक चरित्र हैं जो इस कहानी के साथ समानांतर कहानियों को जन्म दे रहे हैं। इसके अलावा संस्कृति के भी एकाधिक रूप सामने आते हैं। एक संस्कृति वह है जिसे लेखिका स्वयं जीना चाहती है और दूसरी संस्कृति वह है जिसे समाज जीना चाहता है या जी रहा है। समाज जिस संस्कृति को जी रहा है वह लेखिका के लिए समस्याएं खड़ी कर रही है। स्त्री के लिए मुश्किलें पैदा कर रही है। यही वजह है कि मैत्रेयी पुष्पा ने जगह-जगह बेहद चुटीली मुहावरेभरी भाषा का इस्तेमाल किया है। जैसे- 'स्त्रियों की छाती में थालियाँ छनछनाती हैं।' ,' कहते हैं कि पत्नी से बड़ा ' शॉक एब्जॉर्बर ' कोई नहीं होता।' ,' जो खुलकर हँसता है,उसे खुदा की जरूरत नहीं।', 'सूरत के साथ योग्यता न हो तो सुन्दरता अधूरी रहती है' आदि।मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा में चुटीले वाक्य आमतौर पर वहां पर आए हैं जहां पर लेखिका पुनर्व्याख्या की मांग करती है। नए सिरे से कोई बात कहना चाहती है या नई बात की ओर ध्यान खींचना चाहती है ,यह उसकी ध्यान खींचने की कला हैं। इस तरह वह यह भी बताने की कोशिश करती है कि हमारे पास एकाधिक 'स्व' या 'मैं' हैं। या यों भी कह सकते हैं कि एक से अधिक आत्माएं हैं। एकाधिक 'मैं' के अभाव में असल में आख्यान नहीं बनता। नाटकीय इमेजों की सृष्टि नहीं होती। या छद्म की सृष्टि नहीं होती। साहित्य की कलात्मक रणनीति का यह अन्तर्ग्रथित हिस्सा है।मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा की विशेषता यह है कि इसमें हिन्दी संस्कृति के तानेबाने को अतिवादी ढ़ंग से लेखिका खारिज नहीं करती बल्कि धीरे धीरे उसकी परत- दर-परत खोलती है। इससे संस्कृति की समझ बनती है और वे क्षेत्र उजागर होते हैं जहां कायदे से परिवर्तन की जंग को लड़ा जाना है। इसमें बड़ा क्षेत्र है पुंसवादी नजरिए का, और दूसरा है पुंसवादी व्यवस्था,संस्कार और आदतों का। इन दोनों क्षेत्रों की बारीकियों को बड़े ही सुंदर ढ़ंग से लेखिका ने पेश किया है।सवाल यह है कि आत्मकथा के विश्लेषण की पद्धति क्या हो ? क्या एक पद्धति से आत्मकथा समझ में आएगी ? आत्मकथा को एक पद्धति या शास्त्र या सिद्धांत से समझना संभव नहीं है। इस प्रसंग में पहली बात यह कि स्त्री का लिंग तय है और हमारा समाज स्त्री को सामाजिक निर्मिति न मानकर ईश्वरप्रदत्त या प्राकृतिक देन मानकर चलता है। पहली आवश्यकता है कि स्त्री को ईश्वरप्रदत्त न मानें। स्त्री के बारे में बनाए सभी कानूनों, मान्यताओं और संस्कारों को अपरिवर्तनीय, स्वाभाविक ,अनिवार्य और अपरिहार्य न मानें। स्त्री की निर्मिति की सामाजिक प्रक्रियाओं पर नजर रखें, इन प्रक्रियाओं की जितनी गहरी समझ होगी। स्त्री के बारे में उतने ही बेहतर मूल्यांकन की संभावनाएं भी होगी। जिस तरह समाज बदलता रहता है उसी तरह स्त्री भी बदलती रहती है। स्त्री कैसे बदल रही है उस प्रक्रिया को सहृदयभाव से समझने और स्वीकार करने की जरूरत है। स्त्री को जड़ और अपरिवर्तनीय रूप में देखने के कारण ही हमारे आलोचक एक खास किस्म के स्टीरियोटाइप से आगे जाकर स्त्रियों की समस्याओं को समझने में असमर्थ रहे हैं।स्त्री सामाजिक निर्मिति है और परिवर्तनशील अवस्था में रहती है। उसके रूपान्तरित रूप का एक छोर पाठ में होता है और दूसरा छोर पाठक के मन में या सामयिक समाज में होता है जो पाठक पढ़ते समय बनाता है। इस नजरिए से यदि स्त्री को

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

देखें तो स्त्री का पाठ भी गतिशील और परिवर्तनीय होता है।मसलन् स्त्री की नैतिक मान्यताओं के सवाल को ही लें। स्त्री की नैतिकता को सामयिक सरोकारों की रोशनी में बार- बार परिभाषित करने की आवश्यकता है।हमें यह भी देखना चाहिए कि सामाजिक सरोकारों या स्त्री के सरोकारों का सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्र कितना व्यापक है या कितने बड़े क्षितिज को स्त्री घेरती है।[36] स्त्री के नैतिक मूल्यों और मान्यताओं को परिभाषित करने वाले संस्थानों का चरित्र किस तरह का है ? इन संस्थानों का चरित्र ही अंततःस्त्री के निजी और सामाजिक चरित्र का गठन करता है। यदि संस्थानों का चरित्र पुंसवादी है तो तय है स्त्री की मान्यताओं-संस्कारों और सामाजिक अवस्था की स्थितियों का पुंसवादी विचारधारा और संस्थानों के साथ टकराव होगा। यही वजह है ज्योंही कोई स्त्री तयशुदा फ्रेमवर्क के बाहर आकर सोचने-समझने या व्यक्त करने की कोशिश करती है उस पर लांछन लगने शुरू हो जाते हैं। स्त्री के प्रति लांछनों की अभिव्यक्ति इस बात का संकेत है सामाजिक संस्थानों का चरित्र पुंसवादी है और असहिष्णु है। इस नजरिए से देखें तो स्त्री के सामने दोहरी चुनौती है, उसे पुंसवादी संस्थानों के दबाब से अपने लिंग की रक्षा करनी है वहीं दूसरी ओर अपने लिए छोटे छोटे कामों, इच्छाओं, धारणाओं और मान्यताओं की अभिव्यक्ति के लिए जगह भी निकालनी है।

इस क्रम में स्त्री का 'समग्र' और 'अंश' दोनों ही नए सिरे से निर्मित करने की जरूरत है। स्त्री अपनी आत्मकथाओं में पुंसवादी विचारधारा से निर्मित अपने चरित्र,स्वभाव,स्थितियों आदि का व्यापक चित्रण करते हुए उन पहलुओं को सामने लाती है जहां पर वह बदल रही है या प्रतिवाद करके वैकल्पिक परिस्थितियों की खोज कर रही है। विचार विमर्श के लिए यह बेहतर प्रस्थान बिंदु हो सकता है। यहीं से वह अपने चरित्र में बदलाव की प्रक्रियाओं को सामने लाती है।मसलन् एक स्त्री अपनी आत्मकथा को कहते समय जब उन पहलुओं को सामने लाती है जो लकीर से हटकर हैं तो वह रूपान्तरण की ओर ध्यान खींचती है। स्त्री समीक्षा को कायदे से स्त्री के रूपान्तरण पर ध्यान देना चाहिए क्योंकि इसी बिंदु से उसका भविष्य का संसार सामने आता है। यही वह बिंदु है जहां पर उसकी मौजूदा अस्मिता और संभावित अस्मिता में तनाव और अन्तर्विरोध के दर्शन होते हैं। साथ ही उस आख्यान को भी खोल सकते हैं जो उसके 'समग्र' और 'अंश' के बीच में विभिन्न स्तरों पर बिखरा पड़ा है।स्त्री के संदर्भ में एक और तथ्य महत्वपूर्ण है,वह है 'समग्र' और 'अंश' के बीच के अन्तर्विरोध। स्त्री अपनी आत्मकथा में अपने 'समग्र' को पेश करते समय जिन अंशों को पेश करती है वे अंश उसके समग्र के अनुकूल कभी नहीं होते। इस नजरिए से देखें तो पाएंगे कि स्त्री अपने समग्र को रचते समय 'अंश' के जरिए समग्र पर सवालिया निशान लगाती है। 'अंश' के जरिए 'समग्र' को अपदस्थ करने की कोशिश करती है। स्त्री आत्मकथा में 'अंश' वस्तुतः 'समग्र' के विकल्प की तलाश में ही रचे जाते हैं और यही वजह है कि स्त्री आत्मकथा में 'समग्र' और उसके 'अंश' का अन्तर्विरोध हमेशा बना रहता है।जबकि अब तक का रिवाज है कि 'समग्र' और 'अंश' में एकता की बात कही गयी है। 'समग्र' की संगति और परिप्रेक्ष्य में 'अंश' को पढ़ने की वकालत की गयी है। यह आलोचना का पुंसवादी नजरिया है जिसमें 'समग्र' और 'अंश' में एकता को अनिवार्य माना गया है।स्त्री के यहां 'समग्र' और 'अंश' में अन्तर्विरोध होते हैं। वह 'समग्र' का हमेशा प्रतिवाद करती है। अपनी बनी-बनायी इमेज को अस्वीकार करती है।[39]अतः स्त्री के 'अंश' के परिप्रेक्ष्य में 'समग्र' पर पुनर्विचार किया जाना चाहिए। स्त्री की आत्मकथा में नरेटिव और स्त्री के जीवन की परिवर्तन प्रक्रिया का यह सच है कि उसके जीवन के छोटे-छोटे अंश पूरे चरित्र की इमेज को क्रमशः बदलते रहते हैं। यहां 'अंश' से 'समग्र' में आए परिवर्तनों को देखा जाना चाहिए। मसलन् मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा का कोई एक 'अंश' देखें और समझने की कोशिश करें कि स्त्री की समग्र प्रचलित धारणा को नए अंश किस तरह बदलते हैं। अंश –दर- अंश बदलती औरत ही कालांतर में एकदम नई इमेज के साथ सामने आती है।मैत्रेयी पुष्पा ने लिखा है, ' आज मैंने जापानी जॉरजट की सी-ग्रीन साड़ी निकाली,दिल्ली में यही फबेगी दो चोटियों के बदले एक चोटी गूँथी।पति को ऐसे मिली जैसे मैं पहले दिन से ही फैशन के रास्ते पर हूँ। मैं झाँसी की लड़की का झोला उतारकर ,जीवन के प्रबल प्रवाह को बाँधकर अपने व्यक्तित्व को सजावट के साधनों से आकर्षक बनाने पर तुलीगई,क्योंकि मान बैठी कि असली प्रेम विवाह के बाद होता है। प्रेमी,पति के सिवा कोई नहीं हो सकता। पत्नी यदि इसके अलावा किसी संवेग के दबाब में आती है तो पति को खोने में देर नहीं लगती। डॉ.शर्मा तो वैसे भी शर्महया वाली स्त्री को पसन्द करते हैं। वे सामाजिक प्रतिष्ठा, शिष्टाचार और सभ्यता के स्तंभ हैं। मैं आधुनिक होने के नशे में धुत, चाँदनी रात में उतर गई।हॉस्टल पर शुक्लपक्ष उतर रहा था और सफेदा के वृक्षों के लम्बे-लम्बे परदों के बीच जाड़े की रात पति की युवा बाँहों में मोहाविष्ट सी...' सचमुच सपनों का संसार मेरी राह देख रहा है'मैं सोच रही थी।पति को तन-मन से पाना है,जितना ही छोटा समय मिले। खुद को नादान दिखाते हुए या मूर्खता दिखाते हुए या कि उन्हें संभालते हुए, दुलराते और अपने भीतर उतारते हुए,किसी साहस दुस्साहस से गुजरकर भी। आज का दिन ,दिल्ली का दिन। हमारे प्रेम की आधुनिक शुरूआत का दिन न इसके पहले था न इसके बाद... मैं लहरों में उतरने के लिए तैयार,सम्मिलन की उत्ताल तरंगों की कल्पना कर रही हूँ। रात के दस बजे हैं। मैं पति की ओर बढ़ रही हूँ। मेरी खुशी का पारावार नहीं कि यहाँ छतों-छतों,छज्जे-छज्जों आने और खिड़कियोंसे झाँकनेवाला कोई नहीं। झाँककर बात उड़ानेवाला कोई नहीं,'प्रायवेसी' इसी का नाम है।

तभी दस्तक!'

इस पैराग्राफ में कई नई बातें हैं जिनके आधार पर स्त्री की पुरानी अस्मिता में से नई आधुनिक अस्मिता के अंश जन्म ले रहे हैं। परंपरागत औरत अपने पुराने कलेवर को छोड़ रही है और उसमें एक नए किस्म की, नई रूपसज्जा और नई मनोदशा की आधुनिक

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

अनुभूतियों की तलाश करती औरत सामने आ रही है और यह प्रक्रिया आरंभ होती है औरत के सजने-संवरने से और वह तलाश कर रही है अपने लिए 'प्रायवेसी' ,यह एकदम नया बोध है। प्रायवेसी की धारणा के आने के साथ कहानी में यहां से एक नए पुरूष के प्रति आकर्षण का आरंभ भी दिखाई देता है और इस तरह एक औरत के मन में अन्य के प्रति अपील का जन्म भी होता है। दस्तक के बाद क्या होता है उसका बहुत सुंदर वर्णन किया है लेखिका ने। इस क्रम में लेखिका ने अपनी जिन अनुभूतियों को अभिव्यक्त किया उनके विपरीत विलक्षण लेकिन सत्याभास व्यक्त करने में लेखिका को सफलता मिली है। इस तरह के असंख्य चित्र मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा में बिखरे पड़े हैं। कहने का अर्थ यह है आत्मकथा में 'अंश' नए को सामने लाते हैं और इनसे एक नया व्यक्तित्व और मूल्यबोध भी सामने आता है। औरत इसी अर्थ में समग्रता के पैमाने से चीजें देखने का निषेध करती है। वह 'अंश' के आधार पर बनती-संवरती और बदलती है,समग्रता तो उसके विकास की बाधा है।[27]

मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा में एक साथ दो अस्मिताएं प्रतिस्पर्धा करती नजर आती हैं। पहली अस्मिता है परंपरागत औरत की, दूसरी अस्मिता है आधुनिक औरत की। ये दोनों अपने ढ़ंग से एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करती हैं और संसार को बदलती हैं। इसे चाहें तो अस्मिताओं का संघर्ष भी कह सकते हैं। एक तरफ पुराने रूप ,स्वरूप,मूल्य और आदतें बनाए रखने का दबाव और दूसरी ओर पुराने से मुक्त होने की छटपटाहट। इस प्रतिस्पर्धा को समग्रता में देखेंगे तो लेखिका का पूरा व्यक्तित्व नजर आएगा। इस क्रम में मजेदार बात यह है कि प्रत्येक नई कहानी या नया उभरता रूप या जीवनक्षण स्वयं में संपूर्ण था। इस प्रक्रिया में लेखिका बार बार अपने हर कदम की व्याख्या भी करती जाती। इससे यह भी पता चलता है कि उसे अन्य की व्याख्या पर भरोसा नहीं है, वह अपने प्रत्येक कार्य-व्यापार को लेकर पारदर्शिता बनाए रखना चाहती है।इस व्याख्या के बहाने अपने अंदर छिपे एकाधिक अस्मिता के रूपों को वह वैधता प्रदान करती है और पाठकों से भी यह मांग करती है कि वे भी एकाधिक अस्मिताओं को वैधता प्रदान करें। रोचक बात यह है कि मैत्रेयी अपनी एक इमेज को वैध ठहराते हुए दूसरी इमेज को भी वैध ठहराती है और इससे एकाधिक मैं की उनकी रचना में अभिव्यक्ति होती है।आमतौर पर मर्द लेखकों में एक 'मैं 'होता है। वे उसके इर्दगिर्द ही तानाबाना बुनते हैं। लेकिन मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा में एकाधिक मैं हैं और सभी मैं प्रतिस्पर्धा है, यहां 'आत्म' के उदघाटन के काम को लेखिका बड़ी शिद्दत के साथ संपन्न करती है। यह ऐसा 'स्व' है जो सतह पर देखने में सिलसिलेबार विकसित होता है लेकिन वास्तव अर्थ में ऐसा नहीं है। यहां स्त्री का सुनिश्चित 'स्व' सामने नहीं आता बल्कि रूपान्तरित होता 'स्व' सामने आता है। यहां परंपरागत 'स्व' और उदीयमान 'स्व' के बीच में तनाव साफ देखा जा सकता है। इस क्रम में लेखिका अपने परंपरागत 'स्व' को बचाने की चेष्टा नहीं करती बल्कि छोटे छोटे एक्शन के जरिए उसे तोड़ती है। यहां वह गुलामी और 'स्व' के बीच का अन्तर्विरोध भी विकसित करती है।परंपरगत स्त्री वस्तुतः गुलाम औरत की इमेज है जिसके साथ उदीयमान स्त्री के 'स्व' का अन्तर्विरोध है। परंपरा औरत के साथ इतिहास जुड़ा है जबकि उदीयमान स्त्री की अस्मिता के साथ नया सामाजिक यथार्थ जुड़ा है। फलतः आत्मकथा में परंपरा और सामयिक यथार्थ का अन्तर्विरोध जन्म लेता है। परंपरागत औरत और नयी औरत के बीच के अन्तर्विरोध को अभिव्यक्ति तब मिलती है जब किसी खास समय लेखिका कोई एक्शन करती है। इस तरह आत्मकथा में परंपरा और समय के बीच अन्तर्विरोध(टाइम) विकसित होता है। लेखिका समय के साथ रहना पसंद करती है और परंपराओं से मुक्त करती चली जाती है। ये अन्तर्विरोध गुलामी और 'स्व' के बीच का भी है। इस क्रम में 'स्व' का विकास होता है और गुलामी का तानाबाना कमजोर होता चला जाता है।मैत्रेयी पुष्पा ने ज्योंही परंपरागत स्त्री और नई स्त्री की अस्मिताओं के बीच की जंग या अन्तर्विरोधों को चित्रित किया त्योंही वह एक नई सामाजिक अस्मिता के उदय की ओर भी संकेत छोड़ती हैं। जब वे परंपरागत औरत को चित्रित करती हैं और उसके बरक्स रखकर आधुनिक 'स्व' को सामने लाती हैं तो 'स्व' में विभाजन नजर आता है। ऐसी स्थिति में परंपरागत औरत और 'स्व' में किसी भी किस्म का सामंजस्य बिठाना संभव नहीं दिखता।बल्कि विखंडित 'स्व' नजर आता है। इससे 'स्व' के दोहरे चरित्र के दर्शन भी होते हैं। वे अपने जीवन का लेखाजोखा पेश करते हुए बताती हैं कि सामाजिक संबंध, पति-पत्नी के संबंध, मित्रों और रिश्तेदारों के साथ संबंध किस तरह के होते हैं और वे किस तरह अपनी भूमिका अदा करते हैं। इस क्रम में वे गुलाम औरत के व्यापक अनुभव संसार को सामने लाती हैं।इस नजरिए से देखें तो वे आधुनिक स्त्री की गुलामी के विभिन्न चित्रों को उकेरने में सफल रही हैं। साथ ही अन्य किस्म के शोषण और दमन के रूपों को उदघाटित करने में भी उन्हें सफलता मिली है।[20]

मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा में दोहरा जीवन,दोहरी अस्मिता, दुरंगे मूल्य,दुरंगे विचार,दोहरा सामाजिक जीवन आदि को बेपर्दा करती हैं। इस तरह वे दो मैं,दो अस्मिता,दो तरह का जीवन,दोहरी जिम्मेदारियां,दो तरह की चेतना, दो तरह के सामंजस्यहीन विचार और भावबोध को व्यक्त करने में सफल रही हैं। वे अपने जीवन में व्याप्त इस 'दो' को व्याख्या के जरिए बताती जाती हैं और उसके अनुभवों को ऐतिहासिक-सामाजिक संदर्भ में पेश करती हैं।मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा पढ़ते समय हमें आत्मकथा मॉडल के प्रारूप पर भी विचार करना चाहिए। स्त्री आत्मकथा में लेखिका को एकल चरित्र को रूप में देखते समय स्त्री के निर्माण के ऐतिहासिक-सामाजिक कारणों पर नजर जाती है। वहां पर उसके आख्यान के ऐतिहासिक कारणों को देख सकते हैं। जबकि स्व या आत्म या मैं को देखते समय उसके परंपरागरूप के साथ स्व के अंतर्विरोधों का उदघाटन होता है। परंपरागत स्त्री में एक सुनिश्चित औरत नजर आती है जो परंपरागत कामों में पंक्चुअल है।लेकिन जहां यह स्त्री पंक्चुअल नहीं है वहां पर वह नई दिशाओं में अभिव्यक्त करती नजर आती है। यहां पर यह औरत एक समुदाय की सदस्या के रूप में सामने आती है ,एक जेण्डर के रूप में सामने आती है। ऐसी औरत है जिसका कोई इतिहास नहीं है,वह पहचान के उन रूपों को एकसिरे से खारिज करती है जो नैतिकता के तानेबाने में जकड़े हुए हैं।यहीं पर स्त्री के एकाधिक 'मैं' या 'स्व' की अभिव्यंजना भी होती है। यह बहुरूपी स्व वस्तुतःमुक्ति की प्रक्रिया के प्रयासों, नए को अर्जित करने के संघर्ष में ही सामने आता

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

है।इस प्रक्रिया का अन्य कोई विकल्प नहीं है।इस क्रम में यह तथ्य भी उजागर होता है कि स्व का एक ही किस्म का स्वभाव या ओरिएण्टेशन नहीं होता।'स्व" का बहुरूपी चरित्र स्त्री आत्मकथा विधा की विशेषता है। इसका प्रधान कारण है स्त्री का परंपरगत रूप और जीवन एक सामान्य आख्यान देता है जिसमें स्त्री दासता के अनेक रूप अभिव्यक्त होते हैं। यह रूप सम्प्रति,नैतिक तौर पर अप्रासंगिक है। इस परंपरागत रूप के आधार पर स्त्री की परिवर्तित स्थितियों का अंदाजा लगाना संभव नहीं है। इस रूप की जटिलताओं और असफलताओं या अप्रासंगिकता को परंपरागत सिद्धान्तों के जरिए नहीं समझा जा सकता। स्त्री के गुलाम रूप और स्वतंत्र,स्वायत्त आधुनिक रूपों को समझने के लिए स्त्रीवादी सैद्धान्तिकी के एकाधिक सिद्धान्तों की मदद लेने पर ही आत्मकथा खुलती है।[40]

संदर्भ

1.चित्रा मुदगल, 'एक जमीन अपनी', पृ:सः83
2.हंस, सितम्बर 2006, पृ. 89
3.पुष्पा मैत्रेयी, 'इदन्नमम', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी संस्करण (2012), पृःसः भूमिका के उद्धरण से।
4.डॉ0 निर्मला जैन, 'लेख-कथा और नारी संदर्भ', जुलाई, 1994, पृ. 40
5.पुष्पा मैत्रेयी, 'इदन्नमम', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी संस्करण (2012), पृ. 354
6.'द सेकेण्ड सेक्स', सीमोन द बोउवार का हिन्दी रूपांतर, डॉ. प्रभा खेतान द्वारा, हिंद पाकेट बुक्स, दिलसाद गार्डेन्स, संस्करण 1998, पृ. 121
7. पुष्पा मैत्रेयी, 'इदन्नमम', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी संस्करण (2012), पृ. 264
8. पुष्पा मैत्रेयी, 'इदन्नमम', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी संस्करण (2012), पृ. 265
9.नसरीन तसलीमा, अनुवाद, मुनमुन सरकार, 'औरत के हक में', पृ. 99
10. पुष्पामैत्रेयी, 'गुनाह -बेगुनाह', राजकमल प्रकाशन, संस्करण 2012, पृ. 124-125
11. पुष्पा मैत्रेयी, 'इदन्नमम', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी संस्करण (2012), पृ. 192
12. पुष्पा मैत्रेयी, 'इदन्नमम', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी संस्करण (2012), पृ. 206
13. पुष्पा मैत्रेयी, 'इदन्नमम', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी संस्करण (2012), पृ. 354
14.वर्मा निर्मल, 'महादेवी एक मूल्यांकन', लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद (1969), पृ. 208
15. पुष्पा मैत्रेयी, 'इदन्नमम', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी संस्करण (2012), पृ. 265
16.डॉ. सरोज यादव, 'हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में राजनीतिक चेतना', पृ. 30
17. डॉ. क्षितिज धुमाठ्, 'बीसवी सदी के अंतिम दशक के हिन्दी उपन्यासों का प्रवृतिमूलक अनुशीलन', पृ. 132
18. पुष्पा मैत्रेयी, 'इदन्नमम', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी संस्करण (2012), पृ. 409
19. पुष्पा मैत्रेयी, 'इदन्नमम', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी संस्करण (2012), पृ. 409
20. पुष्पा मैत्रेयी, 'इदन्नमम', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरी संस्करण (2012), पृ.
21. अगनपाखी, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 71
22.वही, पृ. 20
23.अगनपाखी, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 77
24.वही, पृ. 82
25.अगनपाखी, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 7
26.'अल्माकबुतरी' 'मैत्रेयी पुष्पा' , पृ. 75
27.कस्तूरी कुण्डल बसै, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 16
28. वही, पृ. 17
29. वही, पृ. 32
30. कस्तूरी कुण्डल बसै, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 330
31.वही, पृ. 259
32.वही, पृ. 287
33. 'चाक' , मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 22
34.वही, पृ. 14
35. झूलानट, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 113
36. विजन, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 133
37. अगनपाखी, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 77

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 1, January 2023 |

| DOI: 10.15680/IJMRSETM.2023.1001032 |

38. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 370
39.कस्तुरी कुण्डल बसै, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 26
40. झूलानट, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 69

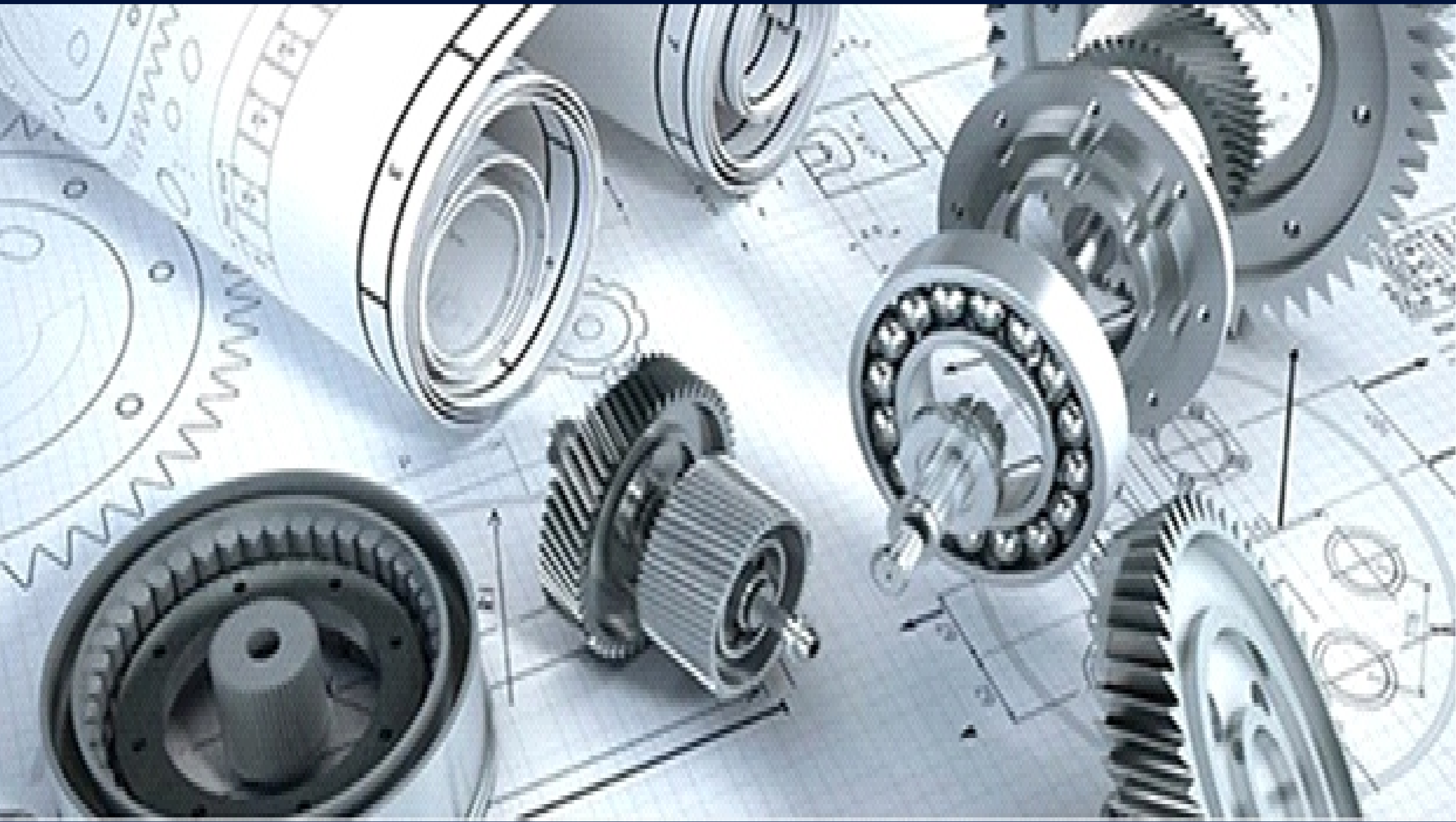

Impact Factor:
7.580

INTERNATIONAL JOURNAL
OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
IN SCIENCE, ENGINEERING, TECHNOLOGY AND MANAGEMENT

+91 99405 72462 +91 63819 07438 ijmrsetm@gmail.com

www.ijmrsetm.com